अध्याय 2

धार्मिक अगुओं के साथ झगड़ा

''उनका विश्वास देखकर'' (2:1–5)[1]

[1]कई दिन के बाद वह फिर कफरनहूम में आया, और सुना गया कि वह घर में है। [2]फिर इतने लोग इकट्ठा हुए कि द्वार के पास भी जगह नहीं थी; और वह उन्हें वचन सुना रहा था। [3]और लोग एक लकवे के रोगी को चार मनुष्यों से उठवाकर उसके पास ले आए। [4]परन्तु जब वे भीड़ के कारण उसके निकट न पहुँच सके, तो उन्होंने उस छत को जिसके नीचे वह था, खोल दिया; और जब वे उसे उधेड़ चुके, तो उस खाट को जिस पर लकवे का रोगी पड़ा था, लटका दिया। [5]यीशु ने उनका विश्वास देखकर उस लकवे के रोगी से कहा, ''हे पुत्र, तेरे पाप क्षमा हुए।''

आयतें 1. इस अध्याय का आरम्भ यह कहते हुए होता है कि यीशु **कई दिन के बाद कफरनहूम में आया**। कार्यवाही का विवरण उस जगह पर जहां 1:21–34 वाली घटनाएं घटी थीं ले आता है। शायद यीशु की चंगाइयों तथा शुद्ध करने पर जोश कम हो गया था जिस कारण वह कफरनहूम में फिर आ सका। मत्ती 9:1 संकेत देता है कि कफरनहूम ''उसका अपना नगर'' था। लोगों ने **सुना कि वह घर में है**।[2] ''घर'' पतरस का हो सकता है (1:29) क्योंकि यह किसी भी हाल में यीशु का घर नहीं था, जिस ''के पास सिर धरने के लिए भी जगह नहीं थी'' (मत्ती 8:20)।[3]

आयत 2. उस देश में सुबह से शाम तक घरों के दरवाज़े बंद नहीं किए जाते थे। (जब तक निजता की इच्छा न हो) और कोई जब चाहे आ जा सकता था। इस अवसर पर **इतने लोग इकट्ठा हुए कि द्वार के पास भी जगह नहीं थी**।

भीड़ का विवरण देता प्रतीत होता है जैसे कोई आंखों देखी कहानी सुना रहा हो (एक बात और यह संकेत कि मरकुस सुसमाचार के पतरस के विवरण को लिख रहा हो सकता है)। भीड़ इतनी अधिक थी कि बीच में से निकला नहीं जा सकता था। इस बार, बहुत से लोग ''वचन'' सुनने के लिए आए न कि केवल चंगाई के लिए; परन्तु दूसरे लोग चंगाई के लिए भी आए।[4]

यीशु **उन्हें वचन सुना रहा था**। यह ''वचन'' (τὸν λόγον, *ton logon*) वही संदेश होगा जो 1:15 में बताया गया है। वह परमेश्वर के सुसमाचार को सुना रहा था जिसका प्रचार उसने गलील में पहले किया था (1:14, 15, 38, 39)।[5] हमारा काम ''वचन का प्रचार'' करना है जैसा कि 2 तीमुथियुस 4:2 में कहा गया है। उस वचन के अगले वाक्यांश में ''समय और असमय'' यह संकेत देता है कि हमें वचन को सुनाना आवश्यक है, लोग इसे सुनना चाहते या न।

आयतें 3, 4. यीशु के उपदेश देते हुए **चार मनुष्य एक लकवे के रोगी को** ले आए। उसे लकवा हुआ हुआ था इस कारण वह बीमार अपने आप कहीं आ जा नहीं सकता था।

वे **भीड़ के कारण उसके निकट न पहुंच सके**। आम तौर पर किसी बीमार या दु:खी

व्यक्ति को जाने देने के लिए लोग रास्ता दे देते हैं, परन्तु इस भीड़ में काफ़ी लोग होंगे जो बीमार थे। इसके अलावा यीशु को सुनने की उत्सुकता के कारण हर कोई उसके निकट जाने की कोशिश में होगा, और ऐसा लगता है कि आगे निकलने के लिए जगह ही नहीं थी। चार मित्रों को लगा होगा कि अपने मित्र को मसीह के पास ले जाने का उनके पास केवल यही अवसर है। आखिर पिछली बार अचानक यीशु कफ़रनहूम से चला गया था (1:38, 39), और इस बार भी वह जा सकता था। इसलिए इन मित्रों ने जल्दी से एक योजना बनाई। उन्होंने "छत में सुराख कर दिया" (NIV)। यह शब्दावली **छत को खोल दिया** से बेहतर अनुवाद है।[6] **छत को उधेड़** लेने के बाद उन्होंने **उस खाट को जिस पर लकवे का रोगी पड़ा था, लटका दिया**।

आयत 5. इस असामान्य घटना में यीशु ने **उनका विश्वास** देखा। हमें ध्यान देना होगा कि केवल लकवे के रोगी का ही नहीं बल्कि उनका विश्वास भी था, चाहे "उनका" सर्वनाम में वह भी हो सकता है। उसका वही विश्वास होगा और उसी ने उन चारों को उसे यीशु के पास ले जाने के लिए प्रोत्साहित किया होगा। परन्तु यदि इन चारों का विश्वास यीशु में न होता, तो वे अपने मित्र को प्रभु के पास ले जाने के लिए इतनी कोशिश न करते। "उनका विश्वास प्रभु के हृदय को छू गया।"[7]

उस आदमी को नीचे उतारने के बाद हमें क्या चंगाई होने की उम्मीद होगी, जो कि नहीं हुई। इसके बजाय, यीशु ने कहा, **"हे पुत्र, तेरे पाप क्षमा हुए।"** इस घोषणा से परमेश्वर की निंदा का आरोप लग गया (2:7)। क्या यीशु के लिए ऐसा करना गलत था? बिल्कुल नहीं। स्पष्टतया उस आदमी की चंगाई से बढ़कर उसका उद्धार था।

इसके अलावा चंगाई, मसीहा के आने के साथ फिर भी जुड़ा बड़ा चिह्न था। यूहन्ना की ओर से भेजे गए दूतों ने यीशु से कहा था कि यदि वह सचमुच में मसीह है तो दिखा दे, परन्तु उसने "हां" या "ना" में उत्तर नहीं दिया। उसने कंगालों को सुसमाचार सुनाए जाने सहित अपने आश्चर्यकर्मों को गिना दिया: "जो कुछ तुम ने देखा और सुना है जाकर यूहन्ना से कह दो; कि अन्धे देखते हैं, लंगड़े चलते फिरते हैं, कोढ़ी शुद्ध किए जाते हैं, बहरे सुनते हैं, मुरदे जिलाए जाते हैं, और कंगालों को सुसमाचार सुनाया जाता है" (लूका 7:22)। यीशु के लिए किसी की देह को बचाने से उसकी आत्मा को बचाना अधिक आवश्यक है, और पहले यही करना आवश्यक है (चाहे इस आदमी ने पहले इसे न चाहा होगा)। यीशु की ओर से लकवे के रोगी के पापों की क्षमा दिखाई देने वाले आश्चर्यकर्म से पहले हो गई। संसार में चंगाई की सबसे बड़ी आशा यही है कि यह जानना है कि पाप क्षमा होते हैं! मनोवैज्ञानिक लोग संदेह की भावनाओं की खतरे को जानते हैं जो कई नाउम्मीद लोगों के लिए भयंकर हो सकता है; क्षमा मिलने का पता चल जाना हर किसी के लिए अच्छी बात है।

कैसे जानें कि यीशु पाप क्षमा कर सकता है (2:6-12)[8]

[6]तब कई शास्त्री जो वहाँ बैठे थे, अपने-अपने मन में विचार करने लगे, [7]"यह मनुष्य क्यों ऐसा कहता है? यह तो परमेश्वर की निन्दा करता है! परमेश्वर को छोड़ और कौन पाप क्षमा कर सकता है?" [8]यीशु ने तुरन्त अपनी आत्मा में जान लिया कि वे अपने-अपने मन

में ऐसा विचार कर रहे हैं, और उनसे कहा, ''तुम अपने-अपने मन में यह विचार क्यों कर रहे हो? [9]सहज क्या है? क्या लकवे के रोगी से यह कहना कि तेरे पाप क्षमा हुए, या यह कहना कि उठ अपनी खाट उठा कर चल फिर? [10]परन्तु जिस से तुम जान लो कि मनुष्य के पुत्र को पृथ्वी पर पाप क्षमा करने का भी अधिकार है।'' उसने उस लकवे के रोगी से कहा, [11]''मैं तुझ से कहता हूँ, उठ, अपनी खाट उठाकर अपने घर चला जा।'' [12]वह उठा और तुरन्त खाट उठाकर सब के सामने से निकलकर चला गया; इस पर सब चकित हुए, और परमेश्वर की बड़ाई करके कहने लगे, ''हम ने ऐसा कभी नहीं देखा।''

मरकुस में दर्ज यीशु के आश्चर्यकर्मों में यह चौथा है। यीशु ने इस घटना का इस्तेमाल बीमारी के साथ-साथ पाप के ऊपर अपनी सामर्थ दिखाने के लिए किया। चाहे पाप और बीमारी का कई बार आपस में सम्बन्ध हो, परन्तु बड़ा वैद्य दोनों को तुरन्त दूर कर सकता है। यूहन्ना 5:14ख में यीशु ने मनुष्य के पाप और उसकी कमज़ोरी के बीच कुछ सम्बन्ध बताया: ''फिर से पाप मत करना, ऐसा न हो कि इससे भारी विपत्ति तुझ पर आ पड़े।''

आयतें 6, 7. चेलों और शेष भीड़ के साथ **शास्त्री** सब देख रहे थे, परन्तु उन्हें कोई वास्तविक आवश्यकता महसूस नहीं हुई, जिस कारण उन्हें कोई आशीष नहीं मिली। यहूदियों का मानना था कि हर प्रकार की बीमारी का सीधा सम्बन्ध व्यक्ति के पाप से होता है। यूहन्ना 9:1-3 में यीशु ने इस मसले पर चेलों की सोच में सुधार किया; और जहां तक वचन बताता है कि उन्होंने दोबारा ऐसा नहीं किया।

इस आदमी को लकवा चाहे जैसे भी हुआ था, यीशु ने सबसे पहले उसे कालांतर में किए गए किसी भी गलत काम को क्षमा देना चुना। यह बात बताते हुए कि उस आदमी के पाप क्षमा हो गए हैं, उसने अपने और परमेश्वर के बीच के सम्बन्ध का संकेत दिया। उस आदमी को क्षमा देने की घोषणा करना स्पष्टतया शास्त्रियों के विशेष लाभ का था, जो उस घर के विशेष अतिथि होंगे और यीशु के पास बैठे होंगे, न कि लकवे के रोगी को।

शास्त्री तथ्यों का पता लगाने निकले थे, बहुत कुछ वैसे ही जैसे यूहन्ना द्वारा भेजे गए लोग उससे पूछताछ करने आए थे (यूहन्ना 1:19)। वे **अपने अपने मन में विचार** कर रहे थे कि यीशु क्षमा देने की बात कहकर परमेश्वर की निंदा कर रहा है। अन्य शब्दों में, वे इन बातों पर विचार तो कर रहे थे परन्तु खुलकर कहने का साहस नहीं जुटा पा रहे थे। परन्तु वह हर मनुष्य के विचारों को जानता है: ''परन्तु यीशु ने अपने आप को उनके भरोसे पर नहीं छोड़ा, क्योंकि वह सब को जानता था; और उसे आवश्यकता न थी कि मनुष्य के विषय में कोई गवाही दे, क्योंकि वह आप ही जानता था कि मनुष्य के मन में क्या है?'' (यूहन्ना 2:24, 25)।

शास्त्री सोच रहे थे, ''**यह मनुष्य क्यों ऐसा कहता है? यह तो परमेश्वर की निन्दा करता है! परमेश्वर को छोड़ और कौन पाप क्षमा कर सकता है?**'' ''यह आदमी कौन है?'' इन प्रश्नों का सार है। इस प्रश्न का उत्तर देना मरकुस के उद्देश्य को बताने वाला हो सकता है; निश्चय ही इस भाग का उद्देश्य यीशु की पहचान को समझाना था।

धार्मिक लोग उसके विरुद्ध इतने क्यों थे? मत्ती 27:18 बताता है कि पिलातुस को भी मालूम था कि उन्होंने ''ईर्ष्या'' के कारण उस पर आरोप लगाया था। हाकिम के रोमी जासूस

पूरे यहूदिया में होंगे जो उसे खबर देते होंगे कि क्या होने वाला है और कहीं पर कोई विद्रोह की सम्भावना तो नहीं है। विलियम हैंड्रिक्सन ने उनकी ईर्ष्या और घृणा के मुख्य कारणों का अच्छा विवरण दिया:

> बेशक, झगड़े से बचा नहीं जा सकता था; क्योंकि वह प्रेम पर ज़ोर देता था, पर वे कर्मकांड पर; वह परमेश्वर की पवित्र व्यवस्था था, परन्तु वे व्यवस्था को दबाने वाली परम्परा; वह स्वतन्त्र था, वे दास; वह भीतरी व्यवहार, और वे बाहरी कार्य। वे उसके सामने अपनी प्रतिष्ठा, अर्थात लोगों के बीच अपनी पकड़ का समर्पण कर देने के कारण उससे कितनी घृणा करते थे![9]

शास्त्रियों का यह मानना सही था कि जो यीशु कह रहा था परमेश्वर के पुत्र को छोड़ किसी और के लिए कहना परमेश्वर की निंदा ही होनी थी। बेशक यीशु ने उन्हें अपने बारे में निष्कर्ष निकालने के लिए विवश करने के लिए उस आदमी के उद्धार की घोषणा की। उनका यह विश्वास सही था कि पाप क्षमा केवल परमेश्वर कर सकता है। ये नियम आज के कुछ धार्मिक अगुओं की परम्परा पर सवाल उठाते हैं जो अंगीकार करवाने और प्रायश्चित करवाने के बाद, अंगीकार करने वाले से कहते हैं, "तेरे पाप क्षमा हुए!"[10]

शास्त्रियों ने सही समझा था कि यीशु केवल परमेश्वर की क्षमा की घोषणा करने का दावा नहीं कर रहा था, बल्कि इसे दे भी रहा था। यदि यीशु चंगाई दे सकता था, तो यह मानते हुए कि बीमारी और पाप का आपस में सम्बन्ध है, वह पाप को भी क्षमा कर ही सकता था! यदि वह पाप क्षमा नहीं कर सकता था, तो फिर वह परमेश्वर की निंदा करने का दोषी था।

"परमेश्वर की निंदा करना" (βλασφημέω, *blasphēmeō*) की परिभाषा परमेश्वर की सामर्थ और विशेष अधिकारों को छीनने के रूप में दी जा सकती है। बुनियादी तौर पर इस शब्द का अर्थ "किसी की बुराई करना, या बदनामी करना" है, जो कि साहित्यिक यूनानी में आम तौर पर और नये नियम में कभी कभी इस्तेमाल होने वाला शब्द है। इसमें इनमें से कोई भी या सभी बातें हो सकती हैं: (1) किसी भी अयोग्य वस्तु को परमेश्वर की बता देना, (2) परमेश्वर को किसी योग्य वस्तु देने से मना करना, (3) किसी शक्ति या अधिकार के लिए जो केवल परमेश्वर का है, किसी दूसरे को देने का दावा करना।

जंगल में सामर्थ होने का दावा करना ही मूसा का पाप था जब उसने परमेश्वर के उसे चट्टान से बात करने के लिए कहने के बाद उस पर छड़ी मारी थी (गिनती 20:8, 12)। वह अपने अधिकार से आगे निकल गया। इस कार्यवाही से उसने परमेश्वर की पवित्रता का अपमान किया। परमेश्वर को "पवित्र" मानकर उसका आदर करने में उसकी हर आज्ञा को वैसे ही मानना आवश्यक है जैसे यह दी गई।

शास्त्रियों को यीशु के अपने लिए परमेश्वर की शक्तियां होने का दावा करना वास्तव में परमेश्वर की निंदा करने जैसा लगा। उनका तर्क गलत नहीं था, परन्तु उनकी बुनियादी बात गलत थी कि यीशु न तो परमेश्वर की ओर से था और न ही ईश्वर। पापों को क्षमा करने की बात कहकर यीशु या तो अपने परमेश्वर होने की बात कर रहा था या कम से कम ईश्वरीय अधिकार होने का दावा कर रहा था। उन्हें पूछना चाहिए था, "क्या यह परमेश्वर का प्रतिनिधि हो सकता है?" या

इससे भी बढ़कर कि ''क्या यह परमेश्वर हो सकता है?'' उनके पूर्वाग्रहों ने उन्हें इनमें से कोई भी प्रश्न पूछने से रोक दिया। शास्त्रियों के क्रोध से पता चला कि वे क्षमा को केवल ईश्वरीय होना मानते हैं और किसी भी ऐसे विचार को नकारते हैं कि यीशु के पास ऐसा अधिकार है। इसका अर्थ यह हुआ कि उनकी समझ में या तो वह बिल्कुल गलत होगा या फिर बहुत पापी!

आयतें 8, 9. शास्त्रियों के आपस में होने वाली बातचीत से परिचित, यीशु ने पूछा, ''**तुम अपने-अपने मन में यह विचार क्यों कर रहे हो?**'' 2:9 में उसने यह कहते हुए कि ''**सहज क्या है?**'' उनके प्रश्न का परोक्ष रूप में उत्तर दिया। इस कथन से अन्य किसी भी वचन से बढ़कर उसके अधिकार का पता चलता है। यीशु ने अपनी सेवकाई में आश्चर्यकर्मों का इस्तेमाल वैसे ही किया जैसे प्रेरित यूहन्ना ने लिखा कि यह उद्धार दिलाने वाले विश्वास के लिए चिह्न थे। उसने संकेत दिया कि उसके आश्चर्यकर्म, चाहे थोड़े से जो हमारे लिए लिखे गए, उद्धार के लिए निरुत्तर करने, विश्वास दिलाने और अगुआई करने के लिए काफ़ी हैं (यूहन्ना 20:30, 31)।

यीशु उनके मन के विचारों को उतनी ही आसानी से देख सकता था जितनी आसानी से वह उनके अदृश्य पाप या पश्चात्ताप को देख सकता था। वह दिखाई देने वाले और अदृश्य संसार में एक समान काम करता है। उसने सच बोला या परमेश्वर की निंदा की, यही मुद्दा पृथ्वी के उसके काम के खत्म होने तक उसके और उनके बीच में बना रहना था। 2:6-12 वाली घटना स्पष्टतया उनके यीशु का विरोध करने का आरम्भ थी।

2:16 में शास्त्रियों ने यीशु की ''उसके पापियों और चुंगी लेने वालों के साथ भोजन'' करने की शिकायत चेलों के पास की। स्वयं उनमें यीशु का विरोध करने की हिम्मत बाद में ही आई थी। 2:18 में यूहन्ना के चेले उसके पास यह प्रश्न लेकर आए थे कि वह उपवास रखने के बजाय दावतों में क्यों भाग लेता है। परन्तु 3:22 में शास्त्रियों ने यह तर्क देते हुए कि '''उसमें शैतान है,' और 'वह दुष्टात्माओं के सरदार की सहायता से दुष्टात्माओं को निकालता है''' उस पर लांछन लगाया। 7:5 में ''फरीसियों और शास्त्रियों'' ने फिर से उसकी आलोचना की: ''तेरे चेले क्यों पूर्वजों की परम्पराओं पर नहीं चलते, और बिना धोए हाथों से रोटी खाते हैं?'' अब तक फरीसी और हेरोदेसी उसकी हत्या का षड्यन्त्र रचना आरम्भ कर चुके थे (देखें 3:6)।[11]

आयतें 10, 11. यीशु ने साबित करने के लिए सामर्थ को दिखाए बिना कभी दावा नहीं किया। बिना आश्चर्यकर्म के उसके दावे को परखने का और कोई तरीका नहीं होना था। उसके लिए क्षमा की घोषणा करने के लिए परमेश्वर और मनुष्य दोनों के मन का पता होना आवश्यक था, और वास्तविक चंगाई की घोषणा करने के लिए जिसे ये प्रत्यक्षदर्शी नकार न पाएं उसके पास परमेश्वर की सामर्थ का होना आवश्यक था।

इन दंग हुए लोगों की सहायता के लिए जिन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि यीशु कौन है, उसने अपनी सामर्थ और यह साबित करने के लिए कि उसे **पृथ्वी पर पाप क्षमा करने का अधिकार है**, उस आदमी को चंगा करके एक चिह्न दिखाया। एक अर्थ में उसने पूछा, ''आसान क्या है: 'कुछ कहना' या कोई आश्चर्यकर्म करना?'' (2:9, 10)। यीशु को मालूम था कि कुछ करने से कहना आसान होता है। जहां पर सब लोग देख सकते हैं, उसने उस आदमी को चंगा किया, जो उसे वास्तव में परमेश्वर के बराबर बनाता है, जिसका वचन वही काम करता है जो वह चाहता है कि वह करे (देखें यशा. 55:11)। यीशु वैसे ही बोलने और करने का दावा कर

रहा था जैसे परमेश्वर पिता ने सृष्टि के समय किया था!

चंगा करने की उसकी योग्यता से उस ईश्वरीय सामर्थ का पता चल गया और इससे यह संकेत मिला कि उसे ऐसी सामर्थ का इस्तेमाल करने का अधिकार है। दर्शक "तेरे पाप क्षमा हुए" की बात की पुष्टि तो नहीं कर पाए, परन्तु उठकर चल फिरने की आज्ञा वैधता को देख सकते थे जबकि आज्ञा पाने वाले ने बिल्कुल वैसा ही किया जैसा उसे करने को कहा गया। यीशु ने आज्ञा दी "**उठ, अपनी खाट उठाकर अपने घर चला जा**" और वह लंगड़ा उसी समय चलने लगा।

मरकुस 2:10 में एक वाक्यांश बताता है जो हमारे लिए थोड़ा अजीब है: **मनुष्य के पुत्र**। यह 2:28 और 8:31 में मिलता है, बिल्कुल 8:29 में पतरस के अंगीकार की तरह।[12] मरकुस में यह चौदह बार मिलता है। इस अभिव्यक्ति "का बड़े ज़ोर शोर से अध्ययन किया गया है, परन्तु इसके पूर्व-मसीही इस्तेमाल या यह कि यीशु के इसके संक्षेप में इस्तेमाल किए जाने के ढंग पर कोई एक मत नहीं है।"[13] यह "सामान्य सामी वाक्यांश (भजन 8:4; यहेज. 2:1)"[14] था। यीशु ने स्वयं सुसमाचार के विवरणों में लगभग अस्सी बार इसका इस्तेमाल किया। मरकुस 14:62 में यीशु ने इस वाक्यांश का इस्तेमाल केवल अपने मनुष्य होने के संदर्भ में ही नहीं बल्कि अपने मसीहा होने के निश्चित अर्थों के साथ करते हुए, दानिय्येल 7:13 की ओर इशारा किया। यह तय कर पाना कठिन है कि यीशु के इसका इस्तेमाल आरम्भ करने से पहले "मनुष्य का पुत्र" को मसीहा होना माना जाता था या नहीं। यह एक और मामला हो सकता है जिसमें यीशु ने अज्ञानी, अविश्वासी लोगों से छुपाते हुए अपने आपको अपने चेलों पर प्रकट करना चाहा।[15] मत्ती 26:63, 64 में यह वाक्यांश विशेषकर "परमेश्वर के पुत्र मसीह" के साथ जुड़ा है:

> परन्तु यीशु चुप रहा। तब महायाजक ने उससे कहा, "मैं तुझे जीवते परमेश्वर की शपथ देता हूं कि यदि तू परमेश्वर का पुत्र मसीह है, तो हम से कह दे।" यीशु ने उससे कहा, "तू ने आप ही कह दिया; वरन् मैं तुम से यह भी कहता हूं कि अब से तुम मनुष्य के पुत्र को सर्वशक्तिमान के दाहिनी ओर बैठे, और आकाश के बादलों पर आते देखोगे।"

यह वही बात है जिसका इस्तेमाल मरकुस 14:61-64 में यीशु पर परमेश्वर की निंदा करने का आरोप लगने के समय प्रमाण के रूप में किया गया था। इसलिए इस अभिव्यक्ति का पहली बार इस्तेमाल सबसे महत्वपूर्ण है; यीशु दानिय्येल 7:13, 14 की भविष्यद्वाणी के पूरा होने का दावा कर रहा था।[16]

आयत 12. यीशु की आज्ञा मिलने पर लकवे का वह रोगी जब **तुरन्त खाट उठाकर सब के सामने से निकलकर चला गया**, तो वह कहने लगे, "**हमने ऐसा कभी नहीं देखा।**" दो हज़ार से अधिक वर्ष बीत जाने के बाद भी मनुष्यजाति ने इसके जैसा कहीं नहीं देखा। मत्ती 9:8 कहता है कि ये गवाह "डर गए" थे; लूका 5:26 में है कि "चकित हुए और बहुत डरकर कहने लगे।" सुसमाचार के तीनों सहदर्शी विवरणों में कहा गया है कि वे लोग **चकित हुए और परमेश्वर की बड़ाई** करने लगे।

संक्षेप में, परमेश्वर के मुख से निकला हुआ वचन सामर्थ से भरा है। जो बात असम्भव थी वह यीशु के कहने से सम्भव हो गई, जिससे लकवे का मारा आदमी यीशु के कहने पर अपना

बिस्तर उठाकर घर को चला गया। यह वही ''परमेश्वर का वचन'' था जिसके बोलने से संसार अस्तित्व में आया (इब्रा. 11:3)। परमेश्वर के बोले गए वचन और उसके लिखित वचन की सामर्थ के बीच कोई अंतर नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह है तो उसका वचन ही। इब्रानियों 4:12, 13 हमें बताता है,

> क्योंकि परमेश्वर का वचन जीवित, और प्रबल, और हर एक दोधारी तलवार से भी बहुत चोखा है, और प्राण, और आत्मा को, और गांठ-गांठ, और गूदे-गूदे को अलग करके, आर पार छेदता है और मन की भावनाओं और विचारों को जांचता है। सृष्टि की कोई वस्तु उससे छिपी नहीं है वरन जिससे हमें काम है, उसकी आंखों के सामने सब वस्तुएं खुली और प्रगट हैं।

उसका लेवी (मत्ती) को बुलाना (2:13, 14)[17]

[13]वह फिर निकलकर झील के किनारे गया, और सारी भीड़ उसके पास आई, और वह उन्हें उपदेश देने लगा। [14]जाते हुए उस ने हलफई के पुत्र लेवी को चुंगी की चौकी पर बैठे देखा, और उस से कहा, ''मेरे पीछे हो ले।'' और वह उठकर उसके पीछे हो लिया।

आयत 13. उसके पास आई ἔρχομαι (*erchomai*) का एक रूप है जिसका अर्थ है ''जाना'' या ''आना''; यह वाक्य रचना ''यीशु के पास आने वाले लोगों की स्थिर, निरन्तर धारा का संकेत है।''[18] मरकुस कई बार भीड़ को यीशु के उपदेश देने की बात करता है (1:21; 2:2); इस बार वह गलील की झील के किनारे था (2:13)। यीशु जहां भी होता, वहां भीड़ इकट्ठा हो जाती; और जहां भी लोगों की भीड़ इकट्ठा होती, वहां **वह उन्हें उपदेश देने** लगता।

आयत 14. यीशु ने **जाते हुए उस ने हलफई के पुत्र लेवी को चुंगी की चौकी पर बैठे देखा**। मत्ती ने अपना परिचय ''मत्ती'' के रूप में करवाया (मत्ती 9:9; देखें मरकुस 3:18); लूका 5:27 उसे ''लेवी'' अर्थात ''चुंगी लेने वाला'' (KJV) कहता है। उस समय इन दोनों नामों का इस्तेमाल इतना आम था कि हर किसी से सुसमाचार के विवरणों में इन दोनों नामों को शामिल करने की उम्मीद कर सकते हैं। ''मत्ती'' ''लेवी'' का दूसरा नाम है। मत्ती 10:3 में उसे ''महसूल लेने वाला'' नाम दिया गया है।

यीशु ने अपने चेलों को बुलाकर चौंकाने वाली बातें कीं। मत्ती यहूदी समाज से निकाला हुआ व्यक्ति था। चुंगी लेने वाले (महसूल लेने वाले) लोग अपनी कमीशन को बढ़ाने और रोम के साथ सहयोग करने के लिए जाने जाते थे। आम लोग उन्हें डाकू या गद्दार मानते थे।[19] यहूदी लोग चुंगी लेने वाले लोगों को आम तौर पर तुच्छ मानते थे; मत्ती के मित्र उसके अपने जैसे लोग ही होंगे। परन्तु पिता की इच्छा में, यह जीवंत उदाहरण बन गया कि यीशु किस प्रकार से हर वर्ग के लोगों को अपनी ओर खींचता है। क्रूस इस बात का मुख्य स्रोत होना था जो लोगों के मनों में जोश जगाए और खींचने वाली शक्ति बने (देखें यूहन्ना 12:32)।

लेवी को केवल इतना कहा गया, **''मेरे पीछे हो ले!''** और उसने तुरन्त अपना काम छोड़ दिया। लूका 5:28 कहता है कि मत्ती ने यीशु के पीछे चलने के लिए अपना कारोबार छोड़कर ''सब कुछ छोड़ दिया'' (ASV)। वह अवश्य मसीह को पहले से जानता होगा और उसका

विश्वास बढ़ रहा होगा; नहीं तो वह इतनी जल्दी उसके पीछे न चलता। हो सकता है कि उसका बलिदान आर्थिक तौर पर दूसरे सब लोगों से बढ़कर हो; परन्तु उसने यीशु के पीछे चलने के लिए ''सब कुछ छोड़'' दिया (लूका 5:28)। पतरस फिर से मछलियां पकड़ने के लिए चला गया हो सकता है, परन्तु मत्ती चुंगी लेने के अपने काम में वापस नहीं गया। वह पहले से ही ईमानदार आदमी रहा होगा, जो केवल बनता कर ही लेता होगा; यदि ऐसा नहीं था, तो शायद उसने यूहन्ना के जोशीले प्रचार के कारण पहले ही गलत करने से मन फिरा लिया था। निश्चय ही वह स्तब्ध था कि यीशु उसे साथी बनाना चाहता है। सभी प्रेरित काम-काज करने वाले साधारण लोग लगते हैं। सुसमाचार के यूहन्ना के विवरण में, हम शमौन, अन्द्रियास, फिलिप्पुस और नतनएल को ऐसी ही परिस्थितियों में देखते हैं (यूहन्ना 1:35-51)।

मत्ती के घर में भोजन (2:15-17)[20]

[15]जब वह उसके घर में भोजन करने बैठा, तब बहुत से चुंगी लेनेवाले और पापी, यीशु और उसके चेलों के साथ भोजन करने बैठे; क्योंकि वे बहुत से थे, और उसके पीछे हो लिये थे। [16]शास्त्रियों और फरीसियों ने यह देखकर कि वह तो पापियों और चुंगी लेनेवालों के साथ भोजन कर रहा है, उसके चेलों से कहा, ''वह तो चुंगी लेनेवालों और पापियों के साथ खाता पीता है!'' [17]यीशु ने यह सुनकर उनसे कहा, ''भले चंगों को वैद्य की आवश्यकता नहीं, परन्तु बीमारों को है: मैं धर्मियों को नहीं, परन्तु पापियों को बुलाने आया हूँ।''

यह भाग फिर से यीशु को लोगों की भीड़ से बातें करते हुए दिखाता है, जैसा कि मरकुस बार-बार कहता है। कई बार ऐसा आराधनालय में (1:21), किसी घर में (2:2), और झील के किनारे (2:13) हुआ। यूहन्ना की पुस्तक में आमने सामने की बातचीत अधिक है, जो कि सुसमाचार के सहदर्शी विवरणों में नहीं है (उदाहरण के लिए, देखें यूहन्ना 1:43-50; 3:1-21; 4:4-26)।

यह वचन यीशु के असली मिशन को दिखाता है जो कि बीमार पापियों को स्वस्थ धार्मिकता के लिए बुलाना था। इस अवसर पर इन पापियों ने मत्ती के निमन्त्रण को मान लिया होगा क योंकि वे यीशु को ''एक मित्र'' के रूप में देखने लगे थे।[21] शायद उन्होंने देखा कि मत्ती का नया विश्वास उसे रोमी कर इकट्ठा करने के कारोबार में रहने से अलग व्यक्ति बना रहा था। निश्चय ही विचार करने पर हम देख सकते हैं कि जो कुछ उसने त्यागा वह उसकी तुलना में जो उसने कमाया था, कुछ भी नहीं था। उसे यीशु के साथ संगति और सुसमाचार का पहला विवरण लिखना मिला, जो कि मसीहियत के सबसे महत्वपूर्ण दस्तावेज़ों में से एक है।

आयत 15. लेवी/मत्ती ने अपने साथी चुंगी लेने वालों और पापी मित्रों को मिलाने और मिलवाने के लिए बुलाया। निश्चय ही यह अपने साथियों को प्रभु के बारे में बताने के लिए एक सुसमाचार सुनाने वाला बोझ रहा होगा। स्पष्टतया मत्ती ने ही सारे भोजन की व्यवस्था की। यीशु **उसके घर में भोजन करने बैठा**। लूका 5:29 हमें बताता है कि यह मत्ती (लेवी) के घर में था। स्पष्टतया ऐसे भोजन में यह **चुंगी लेने वाले** और पापी और यीशु के सबसे करीबी **चेलों** ने भाग लिया होगा।

इन लोगों में विशेषकर ''पापियों'' में क्या गुण था? ''चुंगी लेने वाले [τελῶναι, *telōnai*] और पापी [ἁμαρτωλοὶ, *hamartōloi*]'' (KJV) वाक्यांश लगभग फरीसियों के लिए एक शब्द जैसा ही था। लोगों की नज़र में उन्हें ''पापी'' बनाने वाली बात के तीन आधुनिक सुझाव हैं:[22] पहला यह कि वे फरीसियों की कठोर पारम्परिक रस्मों को नहीं मान रहे थे। इस अर्थ में यीशु और उसके चेले ''पापी'' थे।[23] दूसरा, वे जान-बूझकर मन फिराए बिना सार्वजनिक पापों के दोषी थे। तीसरा, ''पापी'' का अर्थ जो भी किसी के ध्यान में हो उसके अर्थ में हो सकता है। इस संदर्भ में, इसका अर्थ बहुत हद तक वे लोग हैं जो चुंगी लेने वालों के साथ-साथ यूहन्ना के बपतिस्मे को नकारकर खुलकर परमेश्वर की इच्छा का विरोध करके, इस मार्ग को दूसरों की नज़र में साधारण बता रहे थे। यह सच है कि कुछ चुंगी लेने वालों ने यूहन्ना के बपतिस्मा को मान लिया, जबकि इसे नकारने वाले धार्मिक अगुवे ही थे। लूका 7:29, 30 में इसे सिद्ध किया गया है:

> और सब साधारण लोगों ने सुनकर और चुंगी लेनेवालों ने भी यूहन्ना का बपतिस्मा लेकर परमेश्वर को सच्चा मान लिया। परन्तु फरीसियों और व्यवस्थापकों ने उससे बपतिस्मा न लेकर परमेश्वर के अभिप्राय को अपने विषय में टाल दिया।

आयत 16. शास्त्रियों और **फरीसियों** के लिए इन लोगों के साथ मेज की संगति में भाग लेना अपमान की बात थी और उन्होंने यीशु के चेलों पर उसके ऐसे लोगों के साथ मेल जोल रखने पर सवाल उठाया।[24] उन्होंने **उसके चेलों से कहा, ''वह तो चुंगी लेनेवालों और पापियों के साथ खाता पीता है!''** मूसा की व्यवस्था की अपनी कठोर व्याख्या में उन्होंने यहूदियों को व्यवस्था का उल्लंघन करने से रोकने के लिए कई सुक्षा कवच या बाधाएं बना लीं। बाद में यही परम्पराएं बन गईं थीं जिन्हें फरीसी व्यवस्था के जितना ही मानते थे। कई मामलों में तो उन्हें व्यवस्था से बढ़कर भी माना जाता था।[25] उन्होंने यहूदी मत में आने वालों को इन परम्पराओं को मानने के लिए प्रशिक्षित कर रखा था। ऐसी ही परम्पराओं के सम्बन्ध में यीशु ने कहा, ''हे कपटी शास्त्रियो और फरीसियो, तुम पर हाय! तुम एक जन को अपने मत में लाने के लिये सारे जल और थल में फिरते हो, और जब वह मत में आ जाता है तो उसे अपने से दूना नारकीय बना देते हो'' (मत्ती 23:15)।[26] उदाहरण के लिए यीशु ने दशमांश देने (मत्ती 23:23) से लेकर और रस्मी शुद्धता (मरकुस 7:1-5) की उनकी वचनबद्धता में स्पष्ट कपट को देखा। अपने कामों से उन्होंने व्यवस्था की समझ को भी नकार दिया था।

आयत 17. यीशु ने यह सुनकर उनसे कहा, ''भले चंगों को वैद्य की आवश्यकता नहीं, परन्तु बीमारों को है: मैं धर्मियों को नहीं, परन्तु पापियों को बुलाने आया हूँ।'' दिए गए उत्तर में डॉक्टरों और उनके मरीज़ों के सामान्य रूपक का इस्तेमाल किया गया है। संक्षेप में, यीशु वह बड़ा वैद्य है जो बीमारों को उन्हें चंगा करने में सहायता करने के लिए बुलाता है। वह पाप के रोगियों के पास जाता है न कि भले चंगों के पास। मत्ती 9:10-13 उसी आरोप के जो मरकुस 2:16 में है, जवाब में थोड़े से विस्तार से तर्क देता है।

यीशु का कहने का अभिप्राय यह नहीं था कि उसके आलोचक धर्मी हैं बल्कि वह अपने कामों को सही ठहराने के उनके अनुमान का इस्तेमाल कर रहा था। यीशु की नज़र में, ये पापी

ऐसे नकारे हुए लोग नहीं थे जिन्हें कोई उम्मीद न हो सकती हो, बल्कि मरीज़ थे, जो ठीक हो सकते थे। फरीसी आत्मिक तौर पर अपने आपको तंदुरुस्त मानते थे और उनका मानना था कि उनकी आत्माओं के लिए उन्हें डॉक्टर की आवश्यकता नहीं है।

फरीसी रस्मों को मानने में बड़े विश्वासी थे, परन्तु परमेश्वर बलिदान को नहीं, करुणा को पसंद करता है (होशे 6:6; मत्ती 9:13; 12:7; KJV)। हमारे प्रभु की पूरी शिक्षा में यह एक महत्वपूर्ण नियम है। हमें यह याद रखना आवश्यक है कि जो लोग हमें सबसे अधिक बुरे लगते हो सकते हैं, हो सकता है कि उनके अंदर अभी भी कोई चिंगारी हो जो उन्हें मसीह के लिए प्रकाश में बदलने में सहायता कर सकती हो। होशे 6:6 में परमेश्वर के कहे अद्भुत वचनों ने सबसे बुरे अपराधियों को भी उम्मीद दी। लगता नहीं है कि फरीसियों को इस प्रकार की करुणा के अर्थ का पता हो; यदि उन्हें पता होता, तो वे ऐसा करते भी।

उपवास रखने पर विवाद (2:18–20)[27]

[18]यूहन्ना के चेले, और फरीसी उपवास करते थे; अतः उन्होंने आकर उससे यह कहा, ''यूहन्ना के चेले और फरीसियों के चेले क्यों उपवास रखते हैं, परन्तु तेरे चेले उपवास नहीं रखते?'' [19]यीशु ने उनसे कहा, ''जब तक दूल्हा बरातियों के साथ रहता है, क्या वे उपवास कर सकते हैं? अतः जब तक दूल्हा उनके साथ है, तब तक वे उपवास नहीं कर सकते। [20]परन्तु वे दिन आएँगे जब दूल्हा उनसे अलग किया जाएगा; उस समय वे उपवास करेंगे।''

आयत 18. एक ओर जहां **यूहन्ना के चेले, और फरीसी उपवास करते थे**, वहीं यीशु मत्ती के घर में जो कर रहा था वह बिल्कुल उल्ट था। व्यवस्था में केवल प्रायश्चित के दिन उपवास रखना आवश्यक बताया गया था।[28] परन्तु पुराने नियम में उपवास रखने की पवित्र व्यवहार के रूप में सराहना की गई है।[29] उपवास रखना भक्ति का कार्य माना जाता था, इसलिए बहुत से लोग उपवासों की संख्या बढ़ाकर अधिक भक्त दिखाने का प्रयास करते थे।

उपवास की विभिन्न किस्मों तथा अवधियों के बारे में पढ़ते हैं: सूर्य ढलने तक पूरा दिन बिना भोजन के रहना (न्यायियों 20:26; 1 शमूएल 14:24; 2 शमूएल 1:12; 3:35); शोक करते हुए सात दिनों तक उपवास रखना (1 शमूएल 31:13); ''स्वादिष्ट'' भोजन, मांस और दाखमधु से तीन सप्ताह तक परहेज करना (दानिय्येल 10:3); चालीस दिन तक रोटी या पानी के बिना रहना (निर्गमन 24:2, 18; व्यव. 9:9, 18; 1 राजा 19:8)। और उपवास अलग-अलग महीनों में रखे जाते थे।

यीशु के समय तक, यह चरम तक पहुंच गया था जिसमें यहूदी लोग सप्ताह में दो बार उपवास रखते थे (लूका 18:12)। यीशु ने उपवास रखने का विरोध नहीं किया परन्तु उसने अपने चेलों को उपवास रखने के लिए कोई विशेष दिन नहीं बताया। बेशक इसका एक कारण यह था कि वे घूमते रहे थे और उपवास रखना उनके लिए बड़ा कठिन होना था। इस बार, उससे पूछा गया, ''**यूहन्ना के चेले और फरीसियों के चेले क्यों उपवास रखते हैं, परन्तु तेरे चेले उपवास नहीं रखते?**''

आयतें 19, 20. अपने प्रश्न पूछने वालों को दिए गए यीशु के उत्तर में **दूल्हा** और उसके

बरातियों का उदाहरण दिया गया। उसके कहने का मतलब यह था कि जब उपयुक्त हो उपवास रखना अच्छा हो सकता है। मसीहियत में केवल भक्त दिखने के लिए खाना छोड़ने की बनावटी समझ थोपने की कभी कोशिश नहीं की गई। यीशु ने कहा कि दु:ख का समय आएगा तो वह **उस समय वे उपवास करेंगे**। फिर भी दूसरों के उपवास रखने के समय यीशु और उसके चेलों के दावत उड़ाने की बात ने उन्हें लोगों के सामने नास्तिक बना दिया।

उपवास रखा जाना फरीसियों और यूहन्ना के चेलों द्वारा होता था, इसलिए स्वाभाविक रूप से बहुत से लोग चकित थे कि यीशु और उसके चेले उपवास नहीं रखते। वे यह सोचते होंगे कि असली आत्मिक जीवन के लिए उपवास रखना आवश्यक होता है। यूहन्ना ने उपवास रखने को मन फिराव का संकेत बताया होगा; उसका अपना जीवन परहेज से भरा था (देखें मत्ती 3:4; लूका 1:15)।

नये नियम में मसीही लोग बाद में उपवास रखते थे। उदाहरण के लिए, मसीही लोगों ने मण्डलियों में प्राचीनों की नियुक्ति की गई प्रार्थना की और उपवास रखा (प्रेरितों 14:23)। यीशु ने यह मानते हुए कि समय आने पर उसके चेलों ने उपवास रखना था, यह कहने के बजाय कि "यदि तुम उपवास करो," मत्ती 6:16, 17 में कहा, और "जब तू उपवास करे ...।" यह उम्मीद थी कि कुछ गम्भीर अवसर आएंगे कि जब उपवास की आवश्यकता होगी। विशेषकर, यीशु को इस बात का पता होगा कि उसकी मृत्यु के बाद गहरा शोक मनाया जाएगा; तब उपवास रखना बहुत उपयुक्त होना था। परन्तु आनन्द करने के समय में उपवास रखना बेमेल होना था।

पौलुस ने साफ़-साफ़ दिखा दिया कि उपवास रखने की मांग उस विश्वासत्याग का भाग होनी थी, जो कलीसिया में होने वाला था: "परन्तु आत्मा स्पष्टता से कहता है कि आने वाले समयों में कितने लोग ... विश्वास से बहक जाएंगे। ... जो विवाह करने से रोकेंगे, और भोजन की कुछ वस्तुओं से परे रहने की आज्ञा देंगे ..." (1 तीमु. 4:1-3)। फरीसियों के ज़बर्दस्ती के उपवास उनके कपट और उनके विश्वासत्याग का भाग थे। उनके आत्मिक वारिस वैसे ही स्वभाव के लोग हैं जिनकी ओर पौलुस ने इशारा किया और जिनकी यीशु ने निंदा की।

पुराने वस्त्र पर कोरे कपड़े का पैवन्द और पुरानी मशकों में नया दाखरस (2:21, 22)[30]

[21]"कोरे कपड़े का पैवन्द पुराने वस्त्र पर कोई नहीं लगाता; नहीं तो वह पैवन्द उसमें से कुछ खींच लेगा, अर्थात् नया, पुराने से, और वह पहले से अधिक फट जाएगा। [22]नये दाखरस को पुरानी मशकों में कोई नहीं रखता, नहीं तो दाखरस मशकों को फाड़ देगा, और दाखरस और मशकें दोनों नष्ट हो जाएँगी; परन्तु नया दाखरस नई मशकों में भरा जाता है।"

आयतें 21, 22. यीशु के समय में दाखरस के लिए बर्तन जानवरों की खाल के बनाए जाते थे। उन्हें इस्तेमाल करने वाले लोगों को विस्तार के नियमों की समझ होनी आवश्यक थी। नया दाखरस उबल जाने पर चमड़े का बर्तन फैल जाता था। यदि किसी ने **नये दाखरस पुरानी मशकों में** डाल दिया तो इसने मशकों को **फाड़** देना होता था, जिससे दाखरस और मशकें दोनों बेकार हो जाते थे।

यीशु ने नये और पुराने की समझ के महत्व पर बहुत बढ़िया उदाहरण दिया, परन्तु उनके कहने का मतलब क्या था? वह अपने सुनने वालों को बता रहा था कि वे, उन शिक्षाओं को जिनमें नई वाचा थी पुराने नियम के नियमों में न मिलाएं, क्योंकि वह बेमेल होना था। पुराने नियम का आधार नये नियम के आधार से अलग था। लूका 5:39 इसमें जोड़ते हुए कहता है कि पुरानी वाचा (''पुरानी दाखरस'') के लोगों का मानना था कि यह ''बहुत अच्छी'' है जबकि ऐसा नहीं था।

मशकों का और इससे पहले वाला **कोरे कपड़े का पैवन्द** के रूपक में राज्य के नयेपन पर ज़ोर दिया गया। इसे केवल पुरानी पद्धति के साथ जोड़ा नहीं गया था, और निश्चय ही यह फरीसियों की उन गलत व्याख्याओं तथा परम्पराओं का भाग भी नहीं था जिन्हें व्यवस्था में जोड़ा गया था। यहूदी पद्वति में लोगों को उनके पाप के दोष को समझने में सहायता के लिए उपवास रखना आवश्यक बताया गया था। इसलिए यीशु के चेलों का उसी आधार पर उपवास रखना जिस आधार पर यूहन्ना के चेले या फरीसी रखते थे, मसीह में मिलने वाली आशिषों के साथ बेमेल होना था। पुरानी वाचा का पूरा होना ऐसी शर्तों का खत्म होना था (मत्ती 5:17, 18)। मसीह में किसी के जीवन केवल पुराने नियम के साथ चकती लगाना नहीं बल्कि पूरी तरह से नया जीवन है (2 कुरि. 5:17)।[31]

मत्ती 12:8 में यीशु ने कहा, ''मनुष्य का पुत्र तो सब्त के दिन का भी प्रभु है।'' उसके कहने का मतलब था कि सब्त का देने वाला होने के कारण वह इसे नियमित भी कर सकता है और रद्द भी कर सकता है। इस बात के थोड़ा पहले, यीशु ने दया और बलिदान में अंतर बताया (मत्ती 12:7), जो इस बात का संकेत था कि बलिदान दिया जाना बंद होने वाला था। पहले उसने कहा था, ''यूहन्ना तक सारे भविष्यद्वक्ता और व्यवस्था भविष्यद्वाणी करते रहे'' (मत्ती 11:13)। यूहन्ना पुरानी वाचा का अंतिम और नई वाचा का पहला भविष्यद्वक्ता था। उसने अपने सुनने वालों के दिमाग नये विचारों के लिए (उदाहरण के लिए, जैसे बपतिस्मा) खोल दिए। उसे मालूम था कि वह जल्द आने वाली नई व्यवस्था के देने वाले अर्थात यीशु मसीह का अग्रदूत है।

सब्त के दिन बालें तोड़ने पर विवाद (2:23-26)[32]

23ऐसा हुआ कि वह सब्त के दिन खेतों में से होकर जा रहा था, और उसके चेले चलते हुए बालें तोड़ने लगे। 24तब फरीसियों ने उससे कहा, ''देख; ये सब्त के दिन वह काम क्यों करते हैं जो उचित नहीं?'' 25उसने उनसे कहा, ''क्या तुम ने यह कभी नहीं पढ़ा कि जब दाऊद को आवश्यकता हुई, और जब वह और उसके साथी भूखे हुए, तब उसने क्या किया था? 26उसने कैसे अबियातार महायाजक के समय, परमेश्वर के भवन में जाकर भेंट की रोटियाँ खाईं, जिसका खाना याजकों को छोड़ और किसी को भी उचित नहीं, और अपने साथियों को भी दीं?''

आयत 23. ऐसा हुआ कि वह सब्त के दिन खेतों में से होकर जा रहा था, और उसके चेले चलते हुए बालें तोड़ने लगे। चेलों को भूख लगी थी (देखें मत्ती 12:1)। हमें हैरानी होती है कि कितनी बार उनके पास खाने के लिए कुछ नहीं होता था। यीशु ने अपने चेलों को बिना

खाने के चलते नहीं रहने देना था। ऐसी तकलीफ़ बेवजह होनी थी, क्योंकि जो कुछ उन्होंने किया वह व्यवस्था का उल्लंघन नहीं था। व्यवस्था में किसी दूसरे के खेत में हंसुआ या द्रांति लगाने को गलत कहा गया है (व्यव. 23:25)।

आयत 24. तब फरीसियों ने उससे कहा, "देख; ये सब्त के दिन वह काम क्यों करते हैं जो उचित नहीं?" फरीसियों की यह शिकायत एक जायज थी और इसका समझदारी से उत्तर देना बनता था। हमारा सवाल हो सकता था कि "यीशु की स्वीकृति उनके काम का बचाव किस आधार पर हो सकता है?" व्यवस्थाविवरण 24:19 यह आंशिक उत्तर देता है:

> "जब तू अपने पक्के खेत को काटे, और एक पूला खेत में भूल से छूट जाए, तो उसे लेने को फिर न लौट जाना; वह परदेशी, अनाथ, और विधवा के लिये पड़ा रहे; इसलिये कि परमेश्वर यहोवा तेरे सब कामों में तुझ को आशीष दे।"

व्यवस्था के अधीन, हर खेत का एक भाग बटोरने के लिए कंगालों के लिए छोड़ना आवश्यक होता था। लैव्यव्यवस्था 19:9, 10 और 23:22 में भी इस्राएलियों को जरूरतमंदों और परदेशियों (या अजनबियों) के लिए बटोरने के लिए और खेत के कोनों को छोड़ देने की आज्ञा थी। रूत की अद्‌भुत और रूमानी कहानी में यही महत्वपूर्ण बात है (देखें रूत 2:1–23), जो कि ईश्वरीय प्रबन्ध का सुन्दर उदाहरण है।

इसमें चेलों द्वारा चोरी किए जाने की कोई बात नहीं मिलती है, क्योंकि उन्होंने वही किया जिसकी व्यवस्था में अनुमति दी गई थी। परन्तु यह सच है कि यहूदी परम्परा में सब्त के दिन कटाई करने पर व्यवस्था का उल्लंघन बना दिया गया।[33] जब फरीसियों के, "सब्त के दिन वह काम करना उचित नहीं है," कहने का मतलब यह था कि सब्त के दिन किसी प्रकार की कटाई करना पाप था, चाहे इसमें निर्धनता से राहत की बात हो या न।

आयतें 25, 26. यीशु ने उन्हें उनकी परम्पराओं से नहीं बल्कि बाइबल में से उत्तर दिया: **"क्या तुम ने यह कभी नहीं पढ़ा कि जब दाऊद को आवश्यकता हुई ...?"** दाऊद की कार्यवाहियां जैसा कि यीशु ने उन्हें जोड़ा (देखें मत्ती 12:3, 4), उचित मानी जाती होंगी। यानी फरीसी इस घटना को मान्य अपवाद मानते होंगे। शायद उनको इस पर आपत्ति नहीं थी क्योंकि उस समय दाऊद अभिषिक्त राजा था। दाऊद और पवित्र रोटी की कहानी 1 शमूएल 21:1–6 से ली गई है। उसकी आवश्यकता के कारण इस अवसर पर उसे व्यवस्था से छूट दी गई थी; यीशु ने घोषणा की कि उसके चेलों का यह मामला वैसा ही था। आरोप यह था कि ये भूखे लोग किसी भी काम को करके सब्त के दिन का उल्लंघन कर रहे थे। दु:ख की बात है कि फरीसियों ने परमेश्वर की आज्ञाओं से बढ़कर अपनी परम्पराओं को बना दिया था। यह नियम लोगों को व्यवस्था को तोड़ने के निकट भी आने से रोकने के लिए उनकी परम्परागत प्रतिरोधक क्षेत्र का भाग था। इसमें आश्चर्य की बात नहीं है कि यीशु ने कहा कि उन्होंने अपने आपको खतरनाक स्थिति में डाल दिया था: "ये लोग होठों से तो मेरा आदर करते हैं, पर उनका मन मुझ से दूर रहता है। और ये व्यर्थ मेरी उपासना करते हैं, क्योंकि मनुष्य की विधियों को धर्मोपदेश करके सिखाते हैं" (मत्ती 15:8, 9)।

यह ध्यान दिलाते हुए कि विशेष परिस्थितियां हो सकती हैं, यीशु ने अपने चेलों का बचाव

किया; उदाहरण के लिए, ''याजक सब्त के दिन मन्दिर में सब्त के दिन की विधि को तोड़ने पर भी निर्दोष ठहरते हैं'' (मत्ती 12:5)। हर सब्त के दिन याजकों से बढ़कर कोई कठिन काम नहीं करता था। यीशु का उदाहरण के रूप में दाऊद का इस्तेमाल करना महत्वपूर्ण है, क्योंकि वह पहले ही अभिषिक्त राजा था; इसलिए उसकी कहानी यीशु की कहानी से मेल खाती थी जो कि अपने चेलों के भूखा होने पर उन्हें बालें तोड़ने की अनुमति देने वाला राजा था। राजा के रूप में यीशु को उपयुक्त अपवाद तय करने का अधिकार था। हम अधिकारी नहीं है, और न ही हम में से किसी के पास वह अधिकार है।

कुछ लोग तर्क देते हैं कि यीशु ने आवश्यकता के कारण व्यवस्था का उल्लंघन करने की अनुमति दी और वही आवश्यकता माफ़ी के साथ परमेश्वर की प्रकट की गई किसी भी आज्ञा को तोड़ने को सही ठहरा सकती है। दाऊद और उसके साथियों को अनिवार्यता के आधार पर सही ठहराया गया, परन्तु हठधर्मी फरीसी अपवाद की अनुमति देने को तैयार नहीं थे। फिर भी फरीसी दाऊद की कार्यवाही को सही मानते होंगे; नहीं तो उनका जवाब होना था, ''दाऊद भी गलत था और तुम गलत हो!'' वे दाऊद के काम को सही मानते थे इसलिए यीशु ने उनके बेमेल मन को दिखाते हुए, उनके तर्क को उन्हीं के विरुद्ध मोड़ते हुए *adhominem* तर्क (''मनुष्य के लिए तर्क'') के रूप में इस्तेमाल किया। अनजाने में असंगत होना एक बात है, परन्तु जानबूझकर ऐसा करना निन्दनीय है। यीशु के कहने का अर्थ यह था कि ''दाऊद ने जो किया वह गलत था, पर तुम फिर भी उससे सही ठहराते हो क्योंकि उसने ऐसा आवश्यकता के आधार पर किया।[34] मेरे चेलों ने कुछ ऐसा किया है जो कि सब्त के दिन करना गलत नहीं है। फिर भी तुम उन्हें दोषी ठहराते हो क्योंकि उन्होंने व्यवस्था में जोड़ी गई तुम्हारी बात का उल्लंघन किया है। तुम असंगत हो। हम नहीं।''

इस विवरण से यह पता तो चलता है कि यीशु को अपने बजाय अपने चेलों पर अधिक दया आती थी। चालीस दिनों तक उपवास रखने के अंत में, यीशु को ज़बर्दस्त भूख लगी होगी। परन्तु उसने शैतान की चुनौती का सामना किया। उसने अपने लिए पत्थरों को रोटियां बनाने से इनकार कर दिया। इसके बजाय उसने वही स्वीकार करना चुना जो पिता ने उपलब्ध करवाया, और परमेश्वर ने उसकी सेवा करने के लिए स्वर्गदूतों को भेज दिया (मत्ती 4:11; मरकुस 1:13)।

2:26 में **अबियातार** के उल्लेख से वचन के सम्बन्ध में एक समस्या खड़ी होती है: 1 शमूएल 21:1-6 के अनुसार यह घटना अबियातार के समय में नहीं बल्कि महायाजक अहीमलेक के समय में घटी। ASV के कुछ मुद्रणों में एक टिप्पणी में अबियातार ''के दिनों में'' है और NKJV में ये शब्द इटैलिक्स में मिलते हैं। अहीमेलेक का पुत्र अबियातार पहले ही कार्यकारी याजक रहा होगा। हो सकता है कि वह अपने पिता से भी बढ़कर प्रतिष्ठित हो गया हो और घटना के सामान्य समय के साथ मिलाने के लिए उसका नाम दे दिया गया। हो सकता है कि दाऊद के पवित्र रोटी लेने के समय तक वे दोनों ही वहां हों।[35]

पुराने नियम के कई लोगों के एक से अधिक नाम होते थे, और यह भी हो सकता है कि पिता और पुत्र का एक ही नाम हो।[36] उनके अलावा यीशु विशेष तौर पर उस आदमी की बात करने के बजाय सामान्य अर्थ में उस वचन पर ध्यान दिला रहा हो। उस संदर्भ की दु:खद कहानी यह है कि शाऊल दाऊद के पवित्र रोटी खाने पर इतना क्रोधित हुआ कि उसने इसके कारण

पचासी निर्दोष याजकों को मार डाला था। अबियातार दाऊद को बताने के लिए बच गया जबकि अहीमेलेक उन मारे जाने वालों में शामिल था (1 शमूएल 22:14–20)।

शाऊल इस बात से क्रोधित नहीं था कि पवित्र रोटी का दुरुपयोग हुआ था बल्कि वह इस बात से चिढ़ा हुआ था कि दाऊद, जिसे वह अपना शत्रु मानता था, की सहायता की गई थी। बलिदान देने के लिए उसके शमूएल ने प्रतीक्षा न कर पाने पर भी (1 शमूएल 15:22, 23) शाऊल पर परमेश्वर का क्रोध नहीं टूटा था, परन्तु इस घटना से अवश्य टूटा होगा।

''सब्त का दिन मनुष्य के लिए बनाया गया है, न कि मनुष्य सब्त के दिन के लिए'' (2:27, 28)[37]

[27]तब उसने उनसे कहा, ''सब्त का दिन मनुष्य के लिये बनाया गया है, न कि मनुष्य सब्त के दिन के लिये। [28]इसलिये मनुष्य का पुत्र सब्त के दिन का भी स्वामी है।''

आयत 27. चेलों की कार्यवाही के बचाव में अकेले मरकुस में ही एक अंतिम स्पष्ट तर्क है: **''सब्त का दिन मनुष्य के लिये बनाया गया है, न कि मनुष्य सब्त के दिन के लिये।''** यीशु ने समझाया था कि यहां व्यवस्था का सवाल मनुष्य की आवश्यकता के कारण टाला जा सकता है क्योंकि सब्त इस्राएल के लाभ के लिए बनाया गया था न कि लोगों को परेशान करने के लिए।

आयत 28. इसके बाद यीशु ने बड़ी से जो बड़ी और चौंकाने वाली बात कही उसका यह दावा था कि **इसलिये मनुष्य का पुत्र सब्त के दिन का भी स्वामी है** (देखें लूका 6:5)। इससे पहले उसने पाप क्षमा करने का अधिकार होने का दावा किया था (2:9, 10); परन्तु अब वह कह रहा था कि उसके पास सब्त के विषय में निर्णय करने के भी अधिकार हैं। वास्तव में वह अपने आपको परमेश्वर के बराबर बना रहा था, जिसने व्यवस्था को दिया। यदि यहूदी इस अधिकार को समझ जाते, तो मामला सुलझ गया होता; परन्तु उनका यह मानने से इनकार करना कि उसके पास ऐसा अधिकार है उनके उससे और भी घृणा करने का कारण बन गया। फरीसी गुस्से में थे!

प्रभु होने के नाते जिसने सब्त का दिन दिया, केवल वही इसे सही ढंग से चला सकता था और उसे ही अच्छी तरह से मालूम था कि इसे कैसे मानना है। इसका उद्देश्य पूरा हो जाने पर वह इसे हटा भी सकता था। पौलुस ने कुलुस्से की कलीसिया को बताया कि यीशु का हर चीज़ पर नियन्त्रण है: ''इसलिए खाने–पीने या पर्व या नए चान्द, या सब्त के विषय में तुम्हारा कोई फैसला न करे। क्योंकि ये सब आनेवाली बातों की छाया हैं, पर मूल वस्तुएं मसीह की हैं'' (कुलु. 2:16, 17)।

मनुष्य की वास्तविक भलाई पर जब भी सब्त के नियमों से टकराव होता है, तो सब्त के लिए दया को पहल देनी बनती है। ऐसा होने पर यह कौन तय करे? बहुत से निर्णयों पर पहुंचने की कोशिश में हमारे लिए निष्पक्ष ढंग से और स्वतन्त्र रूप में निर्णय देना कठिन होता है। यहां चिंता की बात भोजन नहीं है, क्योंकि यह तो बहुत पहले ही सुलझ गई थी जब यीशु ने ''सब भोजन वस्तुओं को शुद्ध ठहराया'' (मरकुस 7:19)। पौलुस ने बताया कि कुरिन्थुस के कुछ लोगों को यह पता नहीं था कि मूर्तियों को चढ़ाए और अर्पित किए गए भोजन खाए या न। मूर्ति

अपने आप में कुछ नहीं है, इसलिए इससे कोई फर्क नहीं पड़ना था। फिर भी यदि किसी नये विश्वासी को यह लगता हो कि मूर्ति में किसी प्रकार की कोई शक्ति है, तो उसे अपने विवेक को ध्यान में रखते हुए ऐसे भोजन से दूर रहना आवश्यक था। ''मजबूत'' भाई जिसे मालूम हो कि मूर्ति अपने आप में कुछ नहीं है उसे उस भाई के साथ ऐसा चढ़ावा या मांस खाने से बचकर दया दिखानी चाहिए, जिससे उसके भाई को ठोकर न लगे (देखें रोमियों 14:13-23; 1 कुरि. 8:9-13)।

हम अपने भले के लिए अपने आपको कोई भी भोजन खाने की अनुमति दे सकते हैं; परन्तु यदि किसी कमज़ोर भाई के कारण दया के कार्य की आवश्यकता हो तो उन्हें दया का यह उच्च नियम इस्तेमाल करना चाहिए। रोमियों 14:21 खुलासा करता है, ''भला तो यह है कि तू न मांस खाए और न दाखरस पीए, न और कुछ ऐसा करे जिससे तेरा भाई ठोकर खाए।'' कहते हैं कि प्रेरित यूहन्ना जब बहुत बूढ़ा हो गया तो उसे मसीही सभा में ले जाया गया, जहां उसने केवल इतना कहा, ''एक-दूसरे से प्रेम रखो।'' इससे मण्डली की हर समस्या सुलझ जानी थी।

प्रासंगिकता

बड़ा मुद्दा (2:1-12)

कई दिनों तक गलील के बहुत से नगरों में प्रचार करने के बाद (1:39), यीशु कफ़रनहूम में लौट आया। स्पष्टतया गलील में अपनी सेवकाई के दौरान उसने शमौन पतरस के घर को या किसी और के घर को अपना मुख्यालय बनाया हुआ था।

उसके गलील के दौरे से पहले आराधनालय में होने वाली कोढ़ी की चंगाई (1:40) उसके लिए कफ़रनहूम के आम लोगों के बीच संदेश देना अभी भी कठिन बना रहा था। जिस कारण यीशु सादगी से उस घर में उपदेश दे रहा था जहां वह रुका हुआ था।

लोगों को नगर में उसके आने का पता चल जाने पर, वे उस घर की ओर आने लगे और जल्द ही यह भर गया, जिस कारण वहां खड़े होने की भी जगह नहीं बची। एक प्रवेश द्वार लोगों से खचा खच भरा हुआ था और किसी और के अंदर आने के लिए पैर रखने की कोई जगह नहीं थी। मरकुस ने इस दृश्य का एक सजीव चित्र बनाया: ''फिर इतने लोग इकट्ठा हुए कि द्वार के पास भी जगह नहीं थी; और वह उन्हें वचन सुना रहा था'' (2:2)।

चार आदमियों की एक टोली ने सुना था कि यीशु इस घर में इकट्ठा हुए लोगों को उपदेश दे रहा है। जल्दी से उन्होंने निर्णय लिया कि उनके लकवाग्रस्त मित्र को लकवे की उसकी समस्या को लेकर यीशु के पास जाने का बढ़िया अवसर था। उन्होंने उसे खाट पर डाला और जितनी जल्दी हो सका उसे वहां पर ले गए जहां यीशु था। जब उन्होंने घर को लोगों से इतना भरा हुआ देखा कि वे अंदर नहीं जा सकते थे, तो उन्होंने निर्णय लिया कि वे घर के एक और सीढ़ियों पर से ऊपर जाकर छत में से जाने की कोशिश करें। इनकार किए जाने को नामंजूर करते हुए उन्होंने छत का कुछ भाग उधेड़ दिया (यूनानी में मूल में कहा गया है, ''छत को खोल दिया'') और उसे कमरे में और यीशु के सामने नीचे उतार दिया। इन चार जनों ने अपने मित्र को यीशु के पास ले जाने में किसी भी रुकावट को नहीं आने देना था।

जब यीशु ने अपने सामने इस आदमी को देखा, तो उसने उसके साथ क्या किया? हम पहले से ही यह जानते हैं कि यीशु किसी भी गम्भीर, हठी, परेशान व्यक्ति से अपनी सामर्थ को पीछे नहीं करता है (1:40)। वास्तव में हम यीशु को अच्छी तरह से जानते हैं कि उसने लकवे के मारे व्यक्ति और उसकी सहायता करने वालों के विश्वास और दृढ़ इरादे से प्रसन्न होना था।

परन्तु इस लकवाग्रस्त आदमी के साथ यीशु ने जहां से आरम्भ किया वह हमें हैरान कर सकता है। मरकुस 2:5 इसे इस प्रकार से कहता है: ''यीशु ने उनका विश्वास देखकर उस लकवे के रोगी से कहा, 'हे पुत्र, तेरे पाप क्षमा हुए।''' इस विवरण को पढ़ते हुए, हम अपने आप से पूछ सकते हैं, ''यीशु इस अयोग्य व्यक्ति के साथ क्या कर रहा है? वह उसे क्या समझाने की कोशिश कर रहा है?'' देख और सुन रहे श्रोताओं के सामने, यीशु ने उन बड़े विवरणों को लिया जो वह है और उन्हें सही क्रम में डाल दिया। आइए ध्यान से देखें कि उसने ऐसा कैसे किया। हमारे सामने जो निष्कर्ष है वह बाइबल का सबसे बड़ा निष्कर्ष है।

1. यीशु की पहली तस्वीर *बड़ा चंगाई देने वाले* के रूप में उसकी प्रचलित और प्रसिद्ध तस्वीर है। यह वर्णन बिल्कुल सही है। उसके इस पहलू ने लगभग हर जगह जहां वह गया, लोगों को हैरान किया। उसके आश्चर्यकर्मों का विषय हर ज़बान पर चढ़ा विषय बन गया था। इसलिए अवसर मिलने पर लोग ''... सब बीमारों को और उन्हें, जिनमें दुष्टात्माएँ थीं, उसके पास लाए। और सारा नगर द्वार पर इकट्ठा हुआ'' (1:32, 33)। रोगी, बीमारी से जकड़े हुए और निराश लोग, लंगड़ाते हुए जितनी जल्दी हो पाया उसके पास आते थे। वे इतने बीमार थे कि उन्हें केवल उसी में आशा की किरण दिखाई देती थी।

यह चार आदमी जो लकवे के मारे हुए को खाट पर लेकर आए थे, इस खबर से इतना मज़बूत हुए कि उन्होंने अपने मित्र को यीशु तक पहुंचाने के लिए छत में सुराख कर दिया। सुसमाचार के विवरणों में, बड़ा चंगाई देने वाले के रूप में उसकी तस्वीर को आम तौर पर लोगों द्वारा सुने जाने वाले पहले संदेश के रूप में दिखाया गया है। यह लोगों के ऊपर बारिश की फुहार की तरह पड़ती है, जिस कारण बीमार और घायल लोगों का सैलाब यीशु के ऊपर आ पड़ता है।

यदि कोई उस कमरे में जहां मैं बैठा हुआ हूं, आकर कहे, ''पास के बैंक में एक बहुत बड़ी राशि जमा करवा दी गई है,'' तो मैं इस पर इतना जोश में नहीं आऊंगा। परन्तु यदि कोई उस कमरे में जहां मैं बैठा हुआ हूं आकर कहे, ''पास के बैंक में *तुम्हारे खाते में बहुत बड़ी राशि जमा करवा दी गई है,''* तो मैं खुशी से उछल पड़ूंगा और अपने कांपते हुए हाथों में उस संदेश के कागज को पकड़ने के लिए आगे बढ़ूंगा। मेरे खाते में इतनी बड़ी राशि का समाचार मेरे दिल की धड़कन को बढ़ा देगी। यीशु के चंगाई देने वाले गुणों के सम्बन्ध में ऐसा ही हुआ। उसके आश्चर्यकर्मों की खबर से लोगों के अरमान जाग उठे, क्योंकि उन्होंने उसे ऐसे व्यक्ति के रूप में देखा जो उनके दु:खों को दूर कर सकता था।

2. आइए दूसरी तस्वीर की ओर आगे बढ़ते हैं। इस तस्वीर का यीशु ने खुद अहसास करवाया और लोगों को इस पर विचार करने के लिए विवश कर दिया। उसने उनके ध्यान को बीमारी से छुटकारे से पाप से छुटकारे की ओर बदल दिया। उसने उनके सामने अपनी पहचान पाप से *बड़े बचाने वाले* के रूप में रखी। लकवे के मारे आदमी के विश्वास को देखने के बाद, यीशु ने उससे कहा, ''हे पुत्र, तेरे पाप क्षमा हुए'' (2:5)। अन्य शब्दों में, इस आदमी को चंगा

करना, चाहे उसने चंगा कर देना था, पर यह कोई बड़ी बात नहीं थी। यह बहुत आवश्यक था परन्तु सबसे महत्वपूर्ण बात के सामने यह कम आवश्यक था। यह आदमी एक पापी था, और इस तथ्य के कारण उसे दु:खद परिणाम झेलने पड़े। इसका अभिप्राय यह लगता हो सकता है कि वह अपनी पापपूर्ण पसंद के कारण जो उसने की थी इस पाप की अवस्था में था।

यीशु संसार में क्यों आया? उसका पहला और सबसे बड़ा कारण क्या था? उसके जन्म के समय उसे ''उद्धारकर्त्ता'' कहा गया। एक स्वर्गदूत ने चरवाहों से कहा कि ''आज दाऊद के नगर में तुम्हारे लिये एक उद्धारकर्ता जन्मा है, और यही मसीह प्रभु है'' (लूका 2:11)। उसका नाम ''यीशु'' रखा गया क्योंकि यह नाम उसके आने के उद्देश्य को दिखाता था। स्वर्गदूत ने मरियम को यह बताते हुए कि वह एक पुत्र को जन्म देगी, कहा था, ''वह पुत्र जनेगी और तू उसका नाम यीशु रखना, क्योंकि वह अपने लोगों का उनके पापों से उद्धार करेगा'' (मत्ती 1:21)।

लकवे के मारे आदमी की चंगाई की इस घटना में, यीशु बड़े बचाने वाले की तस्वीर से निकलकर बड़े उद्धारकर्त्ता की तस्वीर में आ गया। हमारे लिए सुसमाचार के विवरणों के इस प्रकाशन को समझना आवश्यक है। यीशु शारीरिक दु:खों वाले लोगों को चंगा करने के लिए नहीं आया बल्कि वह हर किसी के लिए जो इसे पाना चाहे उद्धार और अनन्त जीवन दिलवाने आया था। उसने कुछ लोगों को अपनी करुणा दिखाने और अपने परमेश्वर होने का प्रमाण दिखाने के लिए चंगाई दी, परन्तु वह लोगों को चंगाई देने के लिए ही नहीं आया था।

3. यीशु की तीसरी तस्वीर क्या है? यह वह तस्वीर है जो उसे *परमेश्वर के महान पुत्र* होने के रूप में दिखाती है। यह तस्वीर वह बड़ा मुद्दा, बड़ी सच्चाई जो यीशु की सेवकाई के इर्द-गिर्द घूमती थी। सुसमाचार के, यदि सारे नहीं तो अधिकतर विवरणों में यह प्रमाण है कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है। परमेश्वरत्व के दूसरे सदस्य के रूप में वह संसार में हमारा उद्धारकर्त्ता बनने के लिए आया।

यीशु ने अपने बारे में यह विचार इतने ज़ोरदार ढंग से पेश किया कि उसी कमरे में जहां वह खड़ा था, विरोध एकदम से होने लगा। इस सम्बन्ध में, हम मरकुस 1 और 2 में अंतर को देखते हैं। अध्याय 1 में हम प्रसिद्धि और स्वीकार किए जाने की सराहनाओं को देखते हैं। परन्तु अध्याय 2 उस विरोध को दिखाता है जिसने उसको एक दिन क्रूस तक ले जाना था। उसकी सेवकाई उसके परमेश्वर होने की सच्चाई की घोषणा करने की ओर बढ़ रही थी, परन्तु यीशु को इसे बड़े ध्यान से बताना आवश्यक था। वह जानता था कि पूरी तरह से पता चल जाने पर, उसे विरोध का सामना करना पड़ना था, जो अंत में उसकी सेवकाई के अंत का कारण बनना था। इस अवसर पर भी, शास्त्रियों ने जिन्हें यरूशलेम से भेजा गया था, आरोपों के अपने भयंकर काम को दिखाना था: ''तब कई शास्त्री जो वहाँ बैठे थे, अपने-अपने मन में विचार करने लगे, 'यह मनुष्य क्यों ऐसा कहता है? यह तो परमेश्वर की निन्दा करता है! परमेश्वर को छोड़ और कौन पाप क्षमा कर सकता है?''' (2:6, 7)।

आत्मा के द्वारा अपनी आत्मा में यह जानकर कि वे उसके बारे में क्या बातें कर रहे हैं, यीशु ने उनसे पूछा, ''तुम अपने-अपने मन में यह विचार क्यों कर रहे हो? सहज क्या है? क्या लकवे के रोगी से यह कहना कि तेरे पाप क्षमा हुए, या यह कहना कि उठ अपनी खाट उठा कर चल फिर?'' (2:8, 9)। यीशु शास्त्रियों को अपने पापों को क्षमा करने योग्य होने को सही ठहरने

के लिए बेबस कर रहा था।

एक अर्थ में, उन्हें बड़े मुद्दे पर लाकर, यीशु ने कहा, ''मैं तुम्हें प्रमाण दूंगा कि जो तुम्हें यह जानने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य का पुत्र कौन है।'' वह उस लकवाग्रस्त आदमी की ओर मुड़ता जो अपनी खाट के ऊपर सीधा लेटा हुआ था: ''मैं तुझ से कहता हूँ, उठ, अपनी खाट उठाकर अपने घर चला जा'' (2:11)। उसी समय, बेबस कर देने वाला प्रमाण कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है, उनके सामने उठा, अपनी खाट को इकट्ठा किया और वहां उपस्थिति लोगों की अवाक नज़रों के सामने चलने लगा। मरकुस ने कहा, ''वह उठा और तुरन्त खाट उठाकर सब के सामने से निकलकर चला गया'' (2:12)। इस प्रमाण पर बहस करना कठिन है कि वह उठा और किसी के सामने बाहर चला गया है न? वहां इकट्ठा हुए लोग हैरान रह गए। कोई भी उससे जो उसने देखा था, इनकार नहीं कर सकता था। ये लोग जो स्तब्ध थे, एक-दूसरे से कहने लगे, ''हम ने ऐसा कभी नहीं देखा'' (2:12)।

निष्कर्ष: यीशु अपनी तीन तस्वीरों के माध्यम से लोगों को इस घर में ले गया: बड़े चंगाई देने वाले के रूप में उसकी तस्वीर, बड़े उद्धारकर्त्ता के रूप में उसकी तस्वीर, और परमेश्वर के पुत्र के रूप में अपने ईश्वरीय प्रकाशन। ये तीनों तस्वीरें सच्ची हैं, परन्तु वे ऊपर को जाती हैं। एक दूसरी की ओर ले जाती है; पहली दो ऊपर पहुंचकर, तीसरी तस्वीर को गले से लगाकर, नये नियम की सबसे बड़ी सच्चाई की पुष्टि करती है कि यीशु परमेश्वर का ईश्वरीय पुत्र है।

हम यह कहने की परीक्षा में पड़ जाते हैं, ''यदि मैं वहां होता, तो मैंने विश्वास कर लेना था। मुझे इतनी लम्बी प्रक्रिया में से गुज़रने की आवश्यकता नहीं होनी थी; मैंने तुरंत यीशु में विश्वास कर लेना था कि वह परमेश्वर का पुत्र है।'' परन्तु हमें अपने आपको याद दिलाना आवश्यक है, ''हम वहीं *थे*। वचन हमें वहां ले गया।'' असल में हमें कमरे में उपस्थिति उन लोगों से बढ़कर इतिहास की इस घटना को दिखाया गया है। हम उनसे जिन्होंने यीशु से वह सुना जो उसने कहा साफ-साफ सुन सकते हैं और जो यीशु ने किया उसके हर कदम को देख सकते हैं। पवित्र शास्त्र, सुसमाचार के चारों विवरण जो जो वहां हुआ, हमें वह सब दिखाते हैं। यदि किसी को कभी विश्वास करने का अवसर दिया गया, तो वह हम ही हैं।

जो कुछ हमने देखा, उसे देखने और जो हमने सुना उसे सुनने के बाद, निश्चय ही हमें यह विश्वास करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है। वैसे ही, वह बड़ा चंगाई देने वाला और इससे भी बढ़कर, संसार का बड़ा उद्धारकर्त्ता है।

इस दृश्य के केवल यही प्रश्न रह गए हैं जिनका फैसला दिया जाना बाकी है: ''हम इसका क्या करेंगे? क्या हम विश्वास करेंगे या चल देंगे?''

हम दूसरों को यीशु के पास लाते रहे हैं (2:1-12)

मरकुस 2:1-12 में जब यीशु कफ़रनहूम के किसी के घर में उपदेश दे रहा था, तो इलाके के लोग उसे बातें करते हुए सुनने के लिए उस घर में जमा हो गए थे। स्पष्टतया लकवे के मारे आदमी ने या किसी और ने जिसे वह जानता था सुना कि यीशु उस घर में उन लोागें को उपेदश दे रहा है, जो उसे सुनने के लिए उसके पास आए थे। इन मित्रों ने वह करने का निश्चय किया जो वे कर सकते थे, और उन्होंने हर कठिनाई का सामना करते हुए, उस आदमी को यीशु तक

पहुंचाया, और यीशु ने उसे चंगा किया।

इस लाचार आदमी के यीशु के पास लाया जाने के विवरण का इस्तेमाल एक उदाहरण के रूप में करें कि एक मसीही व्यक्ति को किसी दूसरे को यीशु के पास लाना कैसे आवश्यक है। यह सच है कि मरकुस ने इस घटना को हमें आत्माओं को जीतने का ढंग बताने के लिए नहीं रखा; फिर भी यह किसी ऐसे व्यक्ति की सोच को यीशु के उद्धार के पास पाप के बीमार को ला रहा हो, अच्छा उदाहरण देता है।

1. अपने मित्रों को यीशु के पास लाने की योजना बनाते हुए हमें *दूसरों से हमारी सहायता करने को कहना पड़ेगा*। कहा जाता है कि "एक व्यक्ति अपने आप किसी दूसरे को यीशु तक नहीं ले जा सकता।" यह अतिश्योक्ति हो सकती है परन्तु इसमें सच्ची बात है। इस आश्चर्यकर्म वाली कहानी में, लकवे के मारे इस आदमी को यीशु के पास कोई अकेला आदमी नहीं जा सकता था। ऐसा करने के लिए चार आदमियों को मिलकर काम करना पड़ा, और उनके लिए यह काफ़ी कठिन रहा होगा।

किसी को यीशु के पास ले जाना इतना जटिल है कि ऐसा करने के लिए दूसरों की सहायता लेना आवश्यक है। पौलुस ने कहा, "मैं ने लगाया, अपुल्लोस ने सींचा, परन्तु परमेश्वर ने बढ़ाया" (1 कुरि. 3:6)। इसी प्रकार से हम कह सकते हैं, "प्रचारक ने लगाया, प्राचीन ने लगाया, मैंने सींचा, और डीकन ने सींचा; परन्तु परमेश्वर ने बढ़ाया।" हमें एक-दूसरे की आवश्यकता रहती ही है, परन्तु दूसरों को मसीह तक ले जाने के सहयोग करने के प्रयासों में विशेष तौर पर आवश्यकता रहती है।

2. इसके अलावा हमें अपने आपको *परेशानियों के बीच में* जो आएंगी *जमीन तैयार करने में लगाए रखना आवश्यक है*। इस विवरण में जब चार लोग उस अधरंगी का अंत में घर तक ले गए, तो उन्हें समझ में आया कि अंदर जगह ही नहीं है; यीशु के सामने जाने के लिए उनके पास कोई तरीका नहीं था। उन लोगों के लिए हार मान लेना आसान होना था। हम उनमें से किसी एक को यह कहते हुए सुन सकते हैं, "हमने पूरी कोशिश कर ली है, पर अब हम देखते हैं कि यह नामुमकिन है। जगह ही नहीं है। हम इसे यीशु तक नहीं पहुंचा सकते।" शायद किसी और ने यह कहा हो, "हम यहां तक बेकार में नहीं आए। ज़रूरत पड़ी तो हम इसे घर की छत के ऊपर तक ले जाएंगे, छत को पीछे से उखाड़ देंगे और इसे वहां उतार देंगे जहां यीशु है। मेरा मानना है कि यदि हम सब मिलकर काम करें तो ऐसा हो सकता है।"

जब शैतान यह देखता है कि वह किसी भक्त को खो सकता है तो वह हमारे रास्ते में हर प्रकार की रुकावटें खड़ी कर सकता है। दूसरे लोग कह सकते हैं, "कोई तरीका नहीं है!" परन्तु हमें इरादा पक्का रखना चाहिए, "हम कोई न कोई तरीका ढूंढ़ लेंगे या निकाल लेंगे!"

3. हमें अपने लक्ष्य में यीशु के पास अपनी अपेक्षाएं लेकर जाने में दृढ़ होना आवश्यक है। इस आदमी को पता था कि यीशु उसके लकवे का कुछ न कुछ अवश्य करेगा, यदि वह उसके पास चला जाए। चारों मित्रों का एक ही इरादा था कि "हमें उसे यीशु के पास पहुंचाना है।"

जब हम किसी को यीशु और उसकी शिक्षाओं के बारे में बताते हैं, तो हम यह सुनिश्चित हो सकते हैं कि अगला काम यीशु करेगा। हमें केवल इतना करना है कि उस व्यक्ति को यीशु

के बारे में बताएं और उसे समझाएं कि मसीही कैसे बनना है। हम क्षमा नहीं कर सकते, क्योंकि यीशु करेगा। हम उसे परेशानी से निकाल नहीं सकते, परन्तु यीशु निकाल सकता है।

4. एक और लक्ष्य जो हमारा होना आवश्यक है वह यह है कि हमें उस प्रमाण का भाग बनने में अपने मित्रों की सहायता करें कि यीशु परमेश्वर का पुत्र है। इस कहानी के मामले में उस आदमी ने खुद ऐसा प्रमाण बन जाना था। बुनियादी तौर पर यीशु ने कहा, ''मैं तुम्हें दिखाऊंगा कि मुझे पाप क्षमा करने का अधिकार है।'' फिर उसने उस आदमी की ओर मुड़कर उसने कहा, ''मैं तुझ से कहता हूँ, उठ, अपनी खाट उठाकर अपने घर चला जा'' (2:11)। यह आदमी प्रमाण बन गया कि यीशु परमेश्वर का पुत्र मसीह है, जब उसने उठकर अपनी खाट उठाई और घर चला गया।

जब कोई सुसमाचार की आज्ञा मानकर मसीह का अनुयायी बन जाता है तो वह उसी प्रकार से उसके परमेश्वर होने के प्रमाण का भाग बन जाता है। जब हम सताने वाले शाऊल को देखते हैं, जो प्रचारक पौलुस बन गया और डावांडोल शमौन को जो चट्टान पतरस बन गया, तो हमें विश्वास हो जाता है कि यीशु ने ही उन्हें घड़ा। उन्हें इस प्रकार से और कौन बदल सकता था ? यीशु हमारे मित्र के जीवन में आकर उसे नये व्यक्ति में बदलने का अपना कार्य आरम्भ कर देता है (देखें 2 कुरिं. 5:17)।

इस लक्ष्य को पाने में हमारा योगदान यीशु तक लेकर जाना होता है। फिर वह अपने उद्धार और बदलने वाली अपनी सामर्थ के साथ उसे अपने हाथ में लेता है।

5. इसके अलावा, हमें यह तय करना चाहिए कि हम आलोचना करने वालों से परेशान नहीं होंगे। नुक्ताचीनी करने वाले आस-पास ही रहेंगे। इस कहानी में आलोचना करने वालों ने घोषणा कर दी कि यीशु परमेश्वर की निंदा करता है क्योंकि उसने कहा कि उसने उस आदमी के पाप क्षमा कर दिए।

क्या हाल ही में हमें कोई आलोचक मिला है ? शायद जब हम किसी मित्र को मसीह के बारे में बताने के लिए उसे बाइबल क्लास में लेकर आए, तो आलोचना होने लगी: ''यह आदमी नहीं बदल सकता। इसका बदलना नामुमकिन है। मुझे नहीं लगता कि मसीह उसे क्षमा कर सकता है क्योंकि मैं नहीं मानता कि यह आदमी कभी पूरी तरह से मन फिरा सकता है।''

यीशु के विषय में आलोचना करने वाले गलत थे और आज भी आत्माओं का बचाने के हमारे प्रयासों में लोग यीशु के विषय में गलत ही होंगे। हां कई बार कोई पूरी तरह से यीशु के अधिकार में नहीं आता है। परन्तु याद रखें कि यीशु किसी का उद्धार करने के लिए अपनी सामर्थ को कभी छोड़ता नहीं है। यदि वह व्यक्ति अपने आपको यीशु की ओर मोड़कर उसकी आज्ञा को माने, तो उसका उद्धार हो सकता है।

6. अंत में हमें, अपने मित्रों को *सदा के लिए यीशु के पास लाना आवश्यक है*। चंगाई पाया हुआ आदमी घर चला गया। न केवल उसे चंगाई मिली थी बल्कि यीशु के साथ उसका एक नया सम्बन्ध भी बन गया था जो कि ''सदा सदा'' का सम्बन्ध होना था। कम से कम हम उम्मीद कर सकते हैं कि ऐसा ही हुआ। जब हम स्वर्ग में जाएंगे तो इस आदमी से मिलकर हमें उसके बारे में और पता चलेगा। यह पूरी पूरी सम्भावना है कि वह अपने बाकी के जीवन में यीशु के लिए जिया और अनन्तकाल में गया। हम उन लोगों के साथ जिन्हें हम यीशु के पास लाना

चाहते हैं भी चाहते हैं, कि ऐसा ही हो।

निष्कर्ष: इस जीवन में जो सबसे बड़ा काम हम कर सकते हैं वह यीशु के पास दूसरों को लाने का है। अन्द्रियास पतरस के जितना बाहर जाने वाला नहीं था, परन्तु अन्द्रियास चुपके से दूसरों को यीशु के पास ले आता था। नये नियम में जब भी हम उसे देखते हैं, प्रेरितों वाली सूची को छोड़कर, तो वह किसी न किसी को यीशु के पास ला ही रहा होता है।

हम सब कुछ तो नहीं कर सकते। हम अपने मित्रों को क्षमा नहीं दे सकते, उनके नाम मेमने के जीवन की पुस्तक में नहीं लिख सकते, या उन्हें मसीह की देह में नहीं रख सकते। परन्तु जो कुछ हम कर सकते हैं, वह बहुत ही महत्वपूर्ण है। हम उन्हें मसीह के बारे में बता सकते हैं। जब तक हम अपना काम नहीं करते, तब तक यीशु अपना काम नहीं कर सकता!

मत्ती की बुलाहटें (2:13, 14)

हर व्यक्ति के इतिहास को तीन भागों में बांटा जा सकता है। पहले भाग को हम "उसके जीवन का बीता हुआ इतिहास" मान सकते हैं। बीते दिनों में इस व्यक्ति के साथ क्या हुआ है? उसके जीवन के दूसरे भाग को हमें "उसके मन का इतिहास" कहना होगा। उसके अंदर क्या-क या हुआ, जिसे परमेश्वर को छोड़ और कोई नहीं देख सकता। उसके जीवन के तीसरे भाग को हम "उसके जीवन का वर्तमान इतिहास" कह सकते हैं। उसके साथ अब क्या-क्या हो रहा है, जो किसी के लिए, भी जो उसे देखना चाहे, साफ़ दिखाई देता है?

हम किसी भी व्यक्ति के पूरे इतिहास को नहीं जानते। हम जान नहीं सकते हैं। इसे जानने के लिए उस व्यक्ति के मन के अंदर झांकने के योग्य होना आवश्यक है। पक्की बात है कि हमारे जीवनों की सबसे बड़ी पुस्तकों में से एक वह पुस्तक होगी जिसमें हमारे मनों के अंदर की बातें लिखी हों।

ये अवलोकन हमें चुंगी लेने वाले मत्ती तक ले जाते हैं (2:13, 14)। चेला बनने के लिए दी गई उसकी बुलाहट संक्षिप्त और सीधी है। हमें मरकुस (और मत्ती में) यह केवल एक ही आयत में दी गई है: "जाते हुए उस ने हलफई के पुत्र लेवी को चुंगी की चौकी पर बैठे देखा, और उस से कहा, 'मेरे पीछे हो ले'" (2:14; देखें मत्ती 9:9)। लूका इस बुलाहट को दो आयतों में खींच लेता है जो उस विवरण में केवल दो या तीन बातें और मिलती है: "इसके बाद वह बाहर गया और लेवी नामक एक चुंगी लेने वाले को चुंगी की चौकी पर बैठे देखा, और उससे कहा, 'मेरे पीछे हो ले।' तब वह सब कुछ छोड़कर उठा, और उसके पीछे हो लिया" (लूका 5:27, 28)।

उस घर से जाते हुए जहां वह ठहरा हुआ था, यीशु महसूल की चौंकी के पास से गुज़रा; और इसका प्रबन्ध वहां बैठकर रोमी कर इकट्ठे कर रहा था। उसका नाम "लेवी मत्ती" या "मत्ती लेवी" था। मरकुस और लूका उसे "लेवी" कहते हैं, जबकि मत्ती 9:9 में "मत्ती" है। उसके दोनों ही नाम होंगे। यीशु ने उसे केवल इतना कहा, "मेरे पीछे हो ले!" और वह लेवी तुरन्त उसके पीछे हो लिया। उसने चुंगी की अपनी चौंकी को बंद कर दिया होगा और यीशु के पीछे हो लिया होगा। लूका 5:28 कहता है, "वह सब कुछ छोड़कर उठा।"

मत्ती को उस दिन से पहले दो बार बुलाया गया होगा। हमें यह अनुमान लगाना होगा कि वे बुलाहटें कैसी हैं; परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि मत्ती को बुलाया गया, बिल्कुल वैसे जैसे

आपको और मुझे भी। थोड़ा सा विचार करके हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि क्या-क्या हुआ होगा। मत्ती उस बड़ी बुलाहट के लिए जो यीशु ने उस दिन झील के किनारे दी, तैयार हो गया (2:13)।

1. पहली बुलाहट जो मत्ती के पास आई वह *जान पहचान की बुलाहट* थी। मत्ती को यीशु की और उसके वचनों को थोड़ी बहुत जानकारी थी। हम नहीं जानते कि वह यीशु से कब या कहां मिला या वह उसके बारे में कितना जानता था। क्या उसने यीशु को प्रचार करते सुना था? क्या उसने यीशु को कोई आश्चर्यकर्म करते देखा था? वह कुछ देर वहीं उसके आस पास कहीं होगा और उसके दिमाग में उसका व्यक्तित्व और उसका उपदेश बैठ गया होगा। यीशु से मिलने के बाद मत्ती उसे कभी भूल नहीं पाया। यीशु को वास्तविक आश्चर्यकर्म करते देख लेने के बाद मत्ती अपने दिमाग से उस तस्वीर को हटा नहीं पाया। शायद किसी समय यीशु महसूल की उसकी चौंकी के सामने रुका था और मत्ती ने उसे उसके आस-पास खड़े लोगों के साथ बातें करते सुना था। यीशु की बातचीत और उपदेशों को कौन भूल सकता था? वे मत्ती के दिमाग में छा गए और उसके मन से निकल नहीं रहे होंगे। उनकी सच्चाई उसके जीवनभर गूंजती रही।

2. दूसरी बुलाहट जो उसे मिली वह *चिंतन करने की बुलाहट* थी। यह उसके अपने मन से निकली पुकार थी, एक पुकार जो उसकी उस सोच से निकली जो उसने यीशु को कहते और करते सुना था। उसने यीशु को जो देखा था, उसने यीशु से जो सुना था, वह उसके साथ रहा और सच्चाई के साथ उसे चुभन देता रहा। यीशु की तस्वीरें और उसकी बातें उसके दिमाग में घर कर गईं। वे उसके मन को कुरेदते रहे और जो कुछ उसमें कचरा भरा हुआ था, उसे निकालते रहे। जल्द ही वह अपने काम से उकता गया और उस जीवन से जो वह जी रहा था, बड़ा निराश हुआ। वह यह विश्वास करने लगा कि इससे बेहतर कुछ है, कुछ और सही, ऐसे जीवन जो शुद्ध और इसे अच्छा हो। उसके पास धन था और वह रोम का वफ़ादार रहा था; परन्तु फिर भी कुछ था जिसकी कमी लग रही थी। उसका मन खाली और अकेला था। वह न केवल अपने वर्तमान जीवन से बल्कि अपने भविष्य के लिए भी परेशान था।

3. तीसरी बुलाहट, *ईश्वरीय मसीह के पीछे चलने की बुलाहट* यानी वह निमन्त्रण था जो झील के साथ साथ चलते हुए यीशु की ओर से आया था। यीशु मत्ती के बारे में सब कुछ जानता था। उसकी ईश्वरीय आंखों ने इस आदमी के जीवन के अंदर के हर अंग के हर भाग को देख लिया। मत्ती चुंगी लेने से तंग पड़ गया था। मत्ती का मन तैयार हो गया था। उसने इस पर विचार कर लिया था। उसका मन उत्सुकता से भरा, खुला और ईमानदार था। उसके मन की तैयार ज़मीन पर यीशु का संदेश और जीवन जोता और रोपा गया था और अब यीशु के उपदेश और नमूने के बीज़ों का अंकुरित होकर उगने का समय था। यीशु की बुलाहट ने उस बुलाहट को, जो उसके उपदेश और प्रचार से दी गई थी और उस बुलाहट से जो मत्ती को अपने मन में चिंतन करने और विचार करने से मिली थी, और सजा दिया।

जब यीशु ने आकर अपने पीछे होने की बुलाहट दी, तो मत्ती ने अवश्य कहा होगा, ''मैं तैयार हूं। मैं महसूल की अपनी चौंकी को बंद करके तेरे पीछे आता हूं। आज के बाद मैं तेरा चेला बन जाऊंगा।''

निष्कर्ष: मत्ती के यीशु की बुलाहट को स्वीकार करने की कहानी हमें अपने प्रभु की उस

बुलाहट का स्मरण करवाती है, जो हमें मिली है। इसके अलावा यह हमारे सामने उस ढंग को रखती है जिससे सुसमाचार दूसरों के जीवनों में काम कर सकता है जब वे उसके लिए अपने मनों को खोल देते हैं।

हम यीशु से पहली बार बाइबल में मिले जब हमने उसे राज्य का संदेश सुनाते हुए देखा और जब हमने उसे यह पुष्टि करते हुए कि वह कौन है आश्चर्यकर्म करते हुए देखा। बाइबल के द्वारा हमें बुलाहट दी गई। उस बुलाहट, यीशु के जीवन, उसके वचनों, उसकी मृत्यु तथा उसके पुनरुत्थान ने उस बुलाहट के साथ मेल खाते हुए हमारे मनों में जगह बना ली। वह हमारे अंदर रहते हैं और उन्होंने हमें बदल दिया है। उन्होंने हमें कुछ बेहतर दिखने यानी कुछ मसीह के जैसा और अनादि दिखने को विवश किया है।

एक दूसरी बुलाहट जो हमें उस पर जो यीशु ने कहा और किया अपने चिंतन के द्वारा मिलती है। हो सकता है कि हमने ''पैने पर लात'' वैसे ही मारी हो जैसे शाऊल ने मारी थी (प्रेरितों 26:14)। परन्तु हमारे मनों के अंदर सच्चाई हम पर हावी हो गई। यह दूसरी बुलाहट हमारे लिए उसकी मृत्यु और उस अनन्त जीवन पर हमारे विचार करने से आई जो उसने हमें देने की पेशकश की है।

तीसरी बुलाहट आने पर हम तैयार थे। किसी मित्र, प्रचारक या रिश्तेदार ने हमें वास्तविक निमन्त्रण दिया; परन्तु हम दो दूसरी बुलाहटों यानी पवित्र शास्त्र की बुलाहट और अपनी भीतरी यानी विवेक की बुलाहट से पहले से तैयार थे। तीसरी बुलाहट को दिया गया हमारा उत्तर केवल इन दो दूसरी बुलाहटों के हमारे जवाब का परिणाम था।

किसी आत्मा को यीशु के पास लाने के लिए एक से अधिक लोगों की आवश्यकता होती है। जैसे कोई पौधा लगाता है और कोई और उसे सींचता है। किसी के लिए और पौधे लगाना और किसी के लिए और अधिक सींचना आवश्यक होता है, तभी फलदायक जीवन मिलता है। मसीह के लिए मनपरिवर्तन में एक से अधिक या हो सकता है कि तीन या उससे भी अधिक बुलाहटें शामिल हों!

पापियों के साथ खाना (2:15–17)

उठकर यीशु के पीछे चलने की मत्ती को बुलाहट के बाद किसी समय, मत्ती ने यीशु का परिचय अपने साथियों से करवाने के उद्देश्य से भोज किया होगा। शायद वह उन्हें यह बताते हुए कि वह कहां जा रहा है और यीशु के साथ क्यों जा रहा, अलविदा कहना चाहता था। बाइबल कहती है कि उसके साथी चुंगी लेने वाले और पापियों का मिला जुला समूह था। हमें बताया गया है कि ''वे बहुत से थे'' (2:15)।

इतने अधिक लोगों के जमा होने के कारण भोज की योजना बनाने में कुछ समय लगा होगा। बुलाए गए सब लोगों को संदेशा भेजने की प्रक्रिया में कुछ ''शास्त्रियों और फरीसियों'' का नाम लिखा गया होगा या पार्टी में बुलाने के लिए कोई और तरीका अपनाया गया होगा। उन्हें कठिन प्रश्न पूछने के लिए अधिक समय नहीं लगा। उनके लिए विश्वास करना कठिन था कि यीशु का नया-नया बने समर्पित चेले मत्ती के इस इकट्ठ पर इतने सारे घिनौने और खराब लोग होंगे। उन्होंने विशेषकर इस बात की महक आ गई कि यीशु के दूसरे चेले ''उनके साथ भोजन'' कर

रहे थे यानी उनके साथ संगति कर रहे थे। उनके दिमाग में था कि यीशु धर्मी व्यक्ति है इसलिए धर्मी लोग दुष्ट लोगों के साथ मेल जोल नहीं रखते, इस कारण वे स्तब्ध थे कि यीशु के चेले उनके बीच में, उनसे बातें करते और उनसे मिलने के लिए जाते थे।

यीशु ने शानदार व्याख्या के साथ उन्हें उत्तर दिया। उसने वास्तव में उनके आरोप को सराहा। उसके उत्तर से अनिवार्य रूप में उन्हें इस का औचित्य बताया गया कि वह संसार में क्यों आया था। उसका उत्तर हमारे लिए उसके मिशन को समझने में सहायक रहा है। उसके चेलों में से किसी के लिए भी जो अपरम्परागत लोगों की भलाई के लिए, यानी जीवन के अंधेरे पक्ष में रहने वाले लोगों की भलाई को प्रभावित करने का इच्छुक होगा, सहायक हुआ है।

यीशु ने किस प्रकार की व्याख्या दी?

1. उसने कहा कि उसका काम या किसी भी मिशनरी का काम, एक *वैद्य* के बीमार के पास जाने के जैसा है। उसकी बात स्पष्ट थी: "भले चंगों को वैद्य की आवश्यकता नहीं, परन्तु बीमारों को है" (2:17)। एक अर्थ में यीशु स्वस्थ लोगों की सेवा करने के लिए नहीं आया। वह मनुष्यजाति की समस्याओं, विशेषकर पाप की समस्या से निपटने के लिए आया। वह मनुष्यजाति के गुणों पर ज़ोर देने के लिए नहीं आया। उसकी उपस्थिति स्वाभाविक रूप में धार्मिकता की सच्चाइयों को उभार देती है; परन्तु कुल मिलाकर उसका आना मनुष्यजाति के पाप से भरे इनकारों को ठीक करने के लिए नहीं था।

2. यीशु ने कहा कि उसे *एक प्रचारक* से मिलाया जाना ज़रूरी है क्योंकि वह धर्मियों की नहीं बल्कि पापियों की सेवा करने आया था। उसने कहा, "मैं धर्मियों को नहीं, परन्तु पापियों को [मन फिराव के लिए] बुलाने आया हूँ" (2:17)। यीशु यह संकेत नहीं दे रहा था कि इस मुद्दे पर सवाल करने वाले लोग धर्मी थे। नहीं, असल में वह कह रहा था कि उसका मिशन मनुष्यजाति के पापी होने को दिखाना है जिसमें सब लोग शामिल होंगे, यहां तक कि चुंगी लेने वाले और पापी भी जो वहां थे। यदि वे उसकी सुनते, तो वह उन्हें अपना संदेश सुनाने को तैयार था। वह उनके बीच में होने के अवसर का लाभ उठा रहा था, और उसके चेले यही कर रहे थे।

3. मत्ती के इस भोज के विवरण के अनुसार, यीशु ने कहा कि उसके आने को *किसी याजक* से मिलाया जा सकता है जो प्रभु की दया के साथ लोगों को जोड़ना चाह रहा है। यीशु ने अपने आलोचकों से कहा, "इसलिये तुम जाकर इस का अर्थ सीख लो: 'मैं बलिदान नहीं परन्तु दया चाहता हूं' ..." (मत्ती 9:13)। यह कथन होशे 6:6 से लिया गया था। अन्य शब्दों में यीशु दिखाना चाहता था कि उसका हृदय ऐसे लोगों के प्रति भी दया से भरा है जो इस अवसर पर इकट्ठा थे। मूसा की व्यवस्था के अधीन दिए जाने वाले बलिदान यहोवा की दया की ओर ध्यान दिलाते थे। परमेश्वर का ज़ोर बलिदानों के ऊपर नहीं था बल्कि दया, अनुग्रह और उद्धार पर था। बाद में यीशु ने कहा कि उसके चेले "न्याय, दया और विश्वास" पर विशेष ध्यान दें (मत्ती 23:23)।

निष्कर्ष: यीशु की आलोचना करने का एकमात्र ढंग उसके पापी, हठी, दुष्ट लोगों के बीच सेवा करने के लिए उस पर दोष लगाकर हो सकता है। आलोचना करने वालों को उसके चरित्र में कोई कमी नहीं मिलेगी। उन्हें ऐसा कोई समय नहीं मिल सकता जब उसने कोई गलत बात की हो, जब उसने बेईमानी की हो, या जब उसने किसी का दिल दु:खाया हो। उसका जीवन

बिल्कुल बेदाग है। उसके विरुद्ध शास्त्री और फरीसी केवल यही आलोचना बता सके कि उन्हें लगता था कि वह बहुत अधिक दया दिखा रहा है!

परन्तु दोष ढूंढ़ने वाले यदि यह याद रखें कि यदि वह ईमानदारी और समझदारी से अपने अंदर झांक लें, तो वह पाएगा कि वह यीशु की दया पर उतना ही निर्भर है जितना बुरे से बुरा पापी। "इसलिये कि सब ने पाप किया है और परमेश्वर की महिमा से रहित हैं" (रोमियों 3:23)। इस "सब" में हम सब आ जाते हैं। इसमें हर कोई आ जाता है जो परमेश्वर के सामने जवाबदेह हो। हम में से कोई भी परमेश्वर के अनुग्रह के बिना बचाया नहीं जा सकता। हम में से सबसे बढ़िया आदमी को भी, जो दानिय्येल और यूसुफ़ के जैसा हो, उद्धार के लिए परमेश्वर का अनुग्रह पाने के लिए विश्वास, मन फिराव और आज्ञापालन में एक बच्चे समान मन के साथ परमेश्वर के सामने खड़ा होना होगा।

क्या हम इस बात से प्रसन्न नहीं हैं कि यीशु पापियों से बात करता है? क्या हम इस बात पर आनन्दित नहीं हो सकते कि यीशु ने चुंगी लेने वालों और पापियों के साथ मत्ती के घर में खाया? यदि उसने ऐसा न किया होता, तो वह संसार का असली उद्धारकर्त्ता न होता। वह आंशिक उद्धारकर्त्ता होता यानी केवल कुछ चुने हुए लोगों का उद्धारकर्त्ता जो दिखने में अच्छे हों, जिनके कपड़े सुन्दर हों, जिनके तन से महक आती हो और जो हमेशा सही काम करते हों। यदि उसने चुंगी लेने वालों और पापियों के साथ न खाया होता, तो उसने हमारे साथ या किसी के साथ भी नहीं खा पाना था; क्योंकि हम सब पापी हैं! आइए इस तथ्य को सराहें कि यीशु ने चुंगी लेने वालों और पापियों के साथ खाया!

उपवास रखने से भविष्य तक (2:18–22)

लेवी के घर के भोज खत्म होने के बाद या शायद थोड़ी देर बाद, यूहन्ना के चेलों और फरीसियों के चेलों ने यीशु से उपवास रखने के बारे में प्रश्न पूछा। यह भोज जो लेवी ने दिया था, हो सकता है कि उन स्वैच्छिक उपवासों में से किसी उपवास के दौरान दिया गया हो, जो यूहन्ना के चेलों और फरीसियों के चेलों द्वारा तब रखा जाता था। यह भी हो सकता है कि यूहन्ना अभी कैद में था; और इससे उसके चेलों का जीना बड़ा मुश्किल हो गया था, जिस कारण वे समझ नहीं पा रहे थे कि उनका वर्तमान मिशन क्या है। उनका प्रश्न बिल्कुल सही था कि "यूहन्ना के चेले और फरीसियों के चेले क्यों उपवास रखते हैं, परन्तु तेरे चेले उपवास नहीं रखते?" (2:18)।

संदर्भ से यह संकेत मिल सकता है कि उनका प्रश्न यीशु को एक और प्रश्न का उत्तर देने के लिए विवश करने के लिए था कि "यदि तू परमेश्वर की ओर से भेजा गया गुरु होने का दावा करता है, यानी हमारे धर्म से अधिक सिद्ध धर्म का गुरु, तो यह क्या मतलब हुआ कि हम तो उपवास रख रहे हैं, पर तेरे चेले खा पी रहे हैं?" संक्षेप में, वे पूछ रहे थे, "तुम दावत क्यों उड़ा रहे हो जबकि हम उपवास रख रहे हैं?"

यीशु ने उनके प्रश्न का उत्तर विवाह, कपड़े का पैवन्द, और मशकों में दाखरस के तीन उदाहरण देते हुए दिया। ये तीनों उदाहण उपवास रखने की एक विशेष सच्चाई को भविष्य की सामान्य सच्चाई तक ले आते हैं।

विवाह का यीशु का हवाला उपवास रखने के उनके प्रश्न का उसका वास्तविक उत्तर था।

उसने कहा कि विवाह में बाराती दूल्हे के उनके साथ होने हुए उपवास नहीं रख सकते (2:19)। उनका ऐसा करना अनुपयुक्त, गलत और अनुचित होना था। विवाह के सप्ताह के दौरान उन्होंने उपवास नहीं रखना था; बल्कि उन्होंने आनन्द से दावत उड़ाना और आनन्द करना था।

यीशु के अनुसार, लोग उपवास उससे जिसमें वह और उसके चेले थे, बिल्कुल अलग स्थिति में रहते हैं। उसने कहा, ''परन्तु वे दिन आएँगे जब दूल्हा उनसे अलग किया जाएगा; उस समय वे उपवास करेंगे'' (2:20)। यूनानी शब्द (ἀπαίρω, *apairō*) जिसका अनुवाद ''अलग किया जाए'' हुआ है, अचानक और बलपूर्वक छीने जाने से जुड़ा है। यह शब्द सम्भवतया यीशु के क्रूस पर चढ़ाए जाने का संकेत है। यीशु कह रहा था, ''जब ऐसा होगा, तब मेरे चेले उपवास रखेंगे।''

उपवास रखने के प्रश्न के उत्तर से यीशु को अस्पष्ट ढंग से उस आत्मिक जीवन में जो वह देने वाला था और उस आत्मिक जीवन में जो बीत गया था, अंतर समझाने का अवसर मिल गया। यीशु का जीवन पुराने नियम के नियमों तथा नये युग की जनने की इन पीड़ाओं के दौरान रहने वाले लोगों की जीवन शैली से अलग होना था। यीशु ने उपवास के प्रश्न पर बात की और फिर दो सचित्र रूपकों के साथ भविष्य की ओर बढ़ गया, जिनमें से प्रत्येक रूपक का अर्थ बुनियादी तौर पर एक ही है।

1. प्रतिदिन के इन रूपकों के द्वारा जिसे वह संसार में लाने वाला था, यीशु ने अपने सुनने वालों को उसके *नयेपन* को दिखाना चाहा। उसने अपने विचार को इन शब्दों के साथ तस्वीर के रूप में दिखाया: ''कोरे कपड़े का पैवन्द पुराने वस्त्र पर कोई नहीं लगाता; नहीं तो वह पैवन्द उसमें से कुछ खींच लेगा, अर्थात् नया, पुराने से, और वह पहले से अधिक फट जाएगा।'' उसने आगे कहा, ''नये दाखरस को पुरानी मशकों में कोई नहीं रखता, नहीं तो दाखरस मशकों को फाड़ देगा, और दाखरस और मशकें दोनों नष्ट हो जाएँगी; परन्तु नया दाखरस नई मशकों में भरा जाता है'' (2:21, 22)।

अन्य शब्दों में, मसीह में लोगों को जो जीवन मिला है वह इतना नया है कि यह पुराने कपड़े पर नये पैवन्द के लगाने के साथ बिल्कुल मेल नहीं खाता। पुराने कपड़े पर नया पैवन्द लगाना फटे हुए कपड़े को जोड़ने का व्यावहारिक ढंग नहीं है; और यीशु जो कर रहा था वह निश्चय ही पैवन्द लगाने को नहीं दिखाता। उसे और उसे सुनने वालों को इस बात की समझ थी कि पुरानी, घिस गई मशकों में लचक नहीं रहती और खमीर बनी दाख रस के फैलने से फट जानी थीं। वह नई शिक्षा के टुकड़ों को लेकर पुरानी व्यवस्था में लगाने की कोशिश नहीं कर रहा था। नहीं, बिल्कुल नहीं। जो वह स्थापित कर रहा था वह बिल्कुल नया था।

2. इस जीवन में जिसे वह ला रहा था, नयेपन के अलावा यीशु ने निश्चय ही जीवन के *आनन्द से भरे* होने का संकेत दिया, जिसे वह संसार को दे रहा था। हम इसे विश्वास की आनन्द भरी संगति मान सकते हैं जिसे वह हमें दे रहा था। इस जीवन से यीशु के साथ निकट आत्मिक सम्बन्ध निकलना था। इससे बढ़कर आनन्द की बात और क्या हो सकती थी? यह आनन्द, प्रसन्नता तथा शांति से भरी विवाह की जश्न वाली दावत के जैसा होना था।

हां, विश्वास में उपवास रखना होगा; हमारे मसीही जीवनों में यह कई बार दिखाई देगा। परन्तु विश्वास में हमारे बड़े छुड़ाने वाले यीशु के साथ पक्की, निरन्तर, आनन्द भरी संगति भी

है। उसने अपने प्रेरितों (और हम) से वायदा किया, ''... तुम्हारे मन आनन्द से भर जाएंगे; और तुम्हारा आनन्द कोई तुम से छीन न लेगा'' (यूहन्ना 16:22)। इस तथ्य ने मसीह में जीवन को उस जीवन से जो पहले था, बिल्कुल अलग बना देना था।

3. सबसे बढ़कर, यीशु संकेत दे रहा था कि उस जीवन में जो वह देने वाला था *सम्पूर्णता* है। यह कुछ कुछ पुराना और कुछ कुछ नया नहीं होना था। यीशु ने ''नयेपन'' का गुण बताते हुए विशेष तौर पर इस विचार का उल्लेख नहीं किया, परन्तु उसका अभिप्राय निश्चय ही उसमें है। अब पुराने की कोई आवश्यकता नहीं रही। उसने इसे हटा दिया है (इब्रा. 10:9)। हम उस संगति में जो मसीह के साथ हमें मिली है, आनन्द करते हुए बिल्कुल नये में आगे बढ़ सकते हैं।

यीशु में हमारे अनन्त जीवन तथा उद्धार के रूप में जो भी आवश्यक था उसे पूरे परमेश्वरत्व में से तीनों यानी परमेश्वर पिता, परमेश्वर पुत्र और परमेश्वर आत्मा की ओर से हमें देने की पेशकश की गई है। हमें जिस चीज़ की आवश्यकता होती है उसे हमें यीशु में परमेश्वरत्व के निवास के द्वारा उपलब्ध करवाया जाता है।

निष्कर्ष: विश्वास में उपवास रखना है, क्योंकि कठिन समय आएंगे। मुश्किलें आ चुकी हैं और वे फिर जाएंगी। परन्तु नया विश्वास जो यीशु की ओर से मिला है, उस संगति और स्वतन्त्रता को देता है जो हमें पहले कभी नहीं मिली। यह पूरी तरह से नया है, जिसमें वह आनन्द है जो इस संसार की चिंताओं, बीमारियों और परेशानियों से ऊपर है। इसके अलावा इस नये जीवन ने ज़बर्दस्त उद्धार दिया है जो हर तरीके से सम्पूर्ण है।

हम मूसा की व्यवस्था को मानने से मुक्त हैं। नई वाचा में हमें परमेश्वर द्वारा दिए गए नियमों के किसी भी सैट को पूरी तरह से मानने के संघर्ष से छूट दी गई है। हमें आज्ञाकारी होना आवश्यक है परन्तु हम दोषी होने की उम्मीद से मुक्त हैं। अब से हमारे जीवन आज्ञाकारी विश्वास और संगति, आज्ञाकारी विश्वास और क्षमा, आज्ञाकारी विश्वास और स्वतन्त्रता, आज्ञाकारी विश्वास और अनन्तकालिक जीवन के साथ भरे हुए होने चाहिए। इससे बढ़कर वह हमें और क्या दे सकता है?

मानवीय परम्पराओं में से विचार करना (2:23-28)

सब्त के एक दिन, यीशु और उसके चेले गेहूं या जौ के खेत में से जा रहे थे। जब मत्ती ने इसी घटना को लिखा, तो उसने लिखा कि चेले भूखे थे (12:1)। शायद यह दोपहर के समय या इससे थोड़ा बाद की बात है। जब अवसर मिला कि इन चेलों के हाथों में थोड़ा सा खाना मिल सकता था तो उन्होंने इसका लाभ उठाया। अनाज की डंडियां उस रास्ते पर झुकी हुई होंगी जहां से यीशु और उसके चेले जा रहे थे। उनके चलते चलते या किसी विषय पर चर्चा करने के लिए रुक जाने पर, चेलों ने आगे बढ़कर अपने हाथों में थोड़ा सा अनाज इकट्ठा कर लिया। भूसी को निकालने के लिए अपने हाथों में उन बालों को थोड़ा सा रगड़ने के बाद, उन्होंने मुंह से फूक मारकर दाने अपने मुंह में डाल लिए और खा गए।

कुछ फरीसी यीशु और उसकी टोली के साथ-साथ या उनके थोड़ा पीछे पीछे चल रहे थे। चेलों को अपने हाथों में अनाज की बालियां पकड़े देखकर उन्होंने यीशु के सामने एक कठिन प्रश्न रख दिया: ''देख, यह सब्त के दिन वह काम करते हैं जो उचित नहीं?'' फरीसी चेलों पर

सब्त के दिन "काम करने" का आरोप लगा रहे थे। इन कड़े धर्मनिष्ठों अनुसार उनका अपराध दानों को भूसी से अलग करने के लिए अपने हाथों की हथेलियों पर अनाज को रगड़कर सब्त के दिन अनाज की कटाई करना था।

यीशु और उसके चेलों को शास्त्रियों और फरीसियों के ज़बानी नियमों के जो मनुष्य के बनाए सैकड़ों नियमों के विरोध में सफ़ाई देने के लिए अचानक हमला हो गया। इन ज़बानी नियमों में सब्त को मानने की छोटी छोटी बातें थीं। उदाहरण के लिए, धार्मिक अगुओं ने उन्तालीस तरीके बताए थे जिनसे सब्त के दिन काम करने के नियम को तोड़ा जा सकता था।

यीशु ने उनके प्रश्न का उत्तर कैसे देना था? क्या उसने मुड़कर अपने चेलों को सब्त के मामूली लगने वाले नियम को बेपरवाही से तोड़ने के लिए डांटना था?

आइए उन ज़बानी नियमों के बारे में कुछ उपयुक्त प्रश्न पूछें जिन्हें फरीसी लोग यीशु और उसके भूखे चेलों के सामने रख रहे थे। इन प्रश्नों के उत्तरों से हमें उस सही वफ़ादारी में जाने में अगुआई मिलेगी जो आज परमेश्वर हम से चाहता है कि उसके सामने चलते हुए हम में हो।

1. पहला प्रश्न *आरम्भ* का है। हम इन परम्पराओं की जांच करने में संयम बरतें। क्या वे परमेश्वर की ओर से थीं या मनुष्य की ओर से?

हमें उनके स्रोत पर कुछ संदेह है। समय बीतने और रब्बियों की इस बारे में चर्चाओं के चलते रहने को कि सब्त को मानने में क्या-क्या है और सब्त को तोड़ने में कौन कौन सी बात आती है, सब्त के नियम के आस-पास बड़ी बारीकियों और निर्णयों का झुरमुट बन गया। रब्बियों की टिप्पणियों से उनका एक ठोस रूप बन गया था जिन्हें वे कई अवसरों पर उद्धृत करते और लागू करते थे। उदाहरण के लिए, नये नियम के आरम्भ के दिनों में "एक सब्त के दिन की दूरी" वाक्यांश का इस्तेमाल खुलकर किया जाता था। यह वाक्यांश केवल इस चर्चा से निकला था कि किसी के चलने को काम मानने से पहले जिससे सब्त का नियम टूटता हो, सब्त के दिन कोई कितना चल सकता है। रब्बियों ने एक मील का तीन-पांचवां भाग तय कर रखा था (देखें प्रेरितों 1:12)। नये नियम के दिनों में उनका निष्कर्ष एक मुहावरा बन चुका था।

यीशु के अपनी सेवकाई में प्रवेश करने के समय, यहूदी मत के संसार में बहुत सी कहावतें ऐसी थीं जो यहूदियों के दिमाग में अनिवार्य नियम बन चुके थे। अंत में अलिखित ज़बानी परम्पराओं को आवश्यक नियम माना जाता था। यदि उनसे पूछा जाता, तो रब्बी यही कहते, "हम ने इन ज़बानी परम्पराओं को इसलिए रखा है ताकि हम व्यवस्था के आस पास एक बाड़ लगा सकें और हर विश्वासी यहूदी को इसे तोड़ने के खतरे से दूर रख सकें।"

यीशु इन परम्पराओं के बीच में से होकर वास्तविक व्यवस्था में चला गया। उसने कहा, "और ये व्यर्थ मेरी उपासना करते हैं, क्योंकि मनुष्य की विधियों को धर्मोपदेश करके सिखाते हैं" (मत्ती 15:9)। इसका अर्थ यह हुआ कि हमें यह समझना आवश्यक है कि यह नियम, यानी ये ज़बानी परम्पराएं जो व्यवस्था के आस पास इकट्ठी हो गई थीं, मुख्यतया मनुष्यों की विधियां थीं। वे मनुष्य की आज्ञाएं या विचार या निर्णय थे जो अलग-अलग तरीके से लोगों पर थोपे गए थे।

2. इसलिए दूसरा प्रश्न *आज्ञा मानने* से सम्बन्धित है। क्या परमेश्वर आज हम से ज़बानी परम्पराओं, यानी मनुष्यों के निर्णयों को मानने की अपेक्षा करता है?

इसी प्रश्न के साथ हमें यीशु और फरीसियों के बीच होने वाले मतभेद उठने का पता चलता है। यीशु का यह मानना नहीं था कि उसके चेलों ने व्यवस्था को तोड़ा है, जबकि फरीसियों का यह मानना था। मूसा की व्यवस्था के नियमों में भूखे राहगीर को अपने हाथों से अनाज तोड़कर उसे खाने की अनुमति थी, परन्तु व्यवस्था किसी दूसरे के खेत में अनाज की डंडियों पर हंसुआ चलाने की अनुमति नहीं देती (देखें लैव्य. 23:22; व्यव. 23:24, 25)। स्पष्टतया चेलों ने सब्त से सम्बन्धित मूसा की व्यवस्था को नहीं तोड़ा था। परन्तु फरीसियों ने उनके अपने हाथों से अनाज को मसलने को अनाज की कटाई माना। उन्होंने इसे सब्त के दिन काम करने के रूप में देखा। यीशु उन से असहमत था।

यीशु ने फरीसियों को पुराने नियम में से एक उदाहरण देकर उत्तर दिया (1 शमूएल 21:1–6)। उसने दोहराया कि किस प्रकार से इस्राएल के अभिषिक्त राजा दाऊद ने भेंट की रोटियां लीं, यानी वह भोजन जो केवल याजकों के खाने के लिए था, और इसे अपने और अपनी सेना के लिए इस्तेमाल किया। ये लोग शाऊल से भाग रहे थे और दाऊद ने याजक को बताया कि उन्हें बड़ी भूख लगी है। स्पष्टतया दाऊद ने रोटी के साथ जो कुछ भी किया जाना था उससे सम्बन्धित मूसा की व्यवस्था को तोड़ा।

हम नहीं जानते कि फरीसियों ने अपने दिमाग में यह कैसे सोचा। स्पष्टतया उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि दाऊद ने जो किया उसे वह करने की अनुमति थी, चाहे उसके काम से साफ़ तौर पर मूसा की व्यवस्था में लिखी साफ़ साफ़ बात का उल्लंघन हुआ। परन्तु उन्होंने चेलों पर व्यवस्था का उल्लंघन करने का आरोप लगाया, जबकि उन्होंने सब्त के सम्बन्ध में केवल अलिखित ज़बानी परम्परा को तोड़ा था। यीशु ने अपने चेलों को डांटा नहीं। इसके बजाय, यह बहस करने के लिए कि चेलों ने मूसा की व्यवस्था को तोड़ा है, उल्टा फरीसियों को ही डांट लगा दी।

अपने चेलों पर फरीसियों की आलोचना पर यीशु की अंतिम टिप्पणी केवल मरकुस में मिलती है। उसने कहा, '''सब्त का दिन मनुष्य के लिये बनाया गया है, न कि मनुष्य सब्त के दिन के लिये। इसलिये मनुष्य का पुत्र सब्त के दिन का भी स्वामी है''' (2:27, 28)। फरीसियों ने सब्त को मानने की अपनी बारीकियों में सब्त से सम्बन्धित नियमों को न उठाया जा सकने वाला बोझ बना दिया था। उन्होंने सब्त की सुन्दरता और अर्थ को धुंधला करके वास्तविक सब्त को अपनी ज़बानी परम्पराओं के ढेर में छिपा दिया था। यह शानदार, पूरा दिन मनुष्य को विश्राम, चिंतन और आराधना करने के लिए दिया गया था। यीशु ने घोषणा की कि मनुष्य का पुत्र इस दिन का प्रभु है। उसने इसे बनाया था, इसलिए उसे इसके महत्व और इसे मानने के ढंग का अच्छी तरह पता था।

3. हमारा तीसरा प्रश्न जो कि दूसरे प्रश्न का अगला भाग है, *अवलोकन* पर केन्द्रित है। क या यीशु ने इन ज़बानी परम्पराओं को माना और दूसरों के लिए उन्हें मानना आवश्यक बताया? यीशु का चेला यह सोचते समझते हुए कहता है, ''उनके सम्बन्ध में मैं मसीह की बात मानूंगा। मैं उसका जो उसने यहूदियों की ज़बानी परम्पराओं या सामान्य रूप में मनुष्यों की परम्पराओं के साथ किया, अध्ययन करूंगा, और मैं वही करूंगा जो उसने किया।'' यीशु का चेला होने के नाते उसके प्रति हमारी वचनबद्धता का अर्थ उसकी अगुआई में चलना है।

हमारे पास उपलब्ध सिखाने की सबसे उत्तम तकनीकों में से एक उदाहरण देना है। यीशु का सब्त को मानने पर अपने समय के धार्मिक अधिकारियों के साथ आम तौर पर झगड़ा हो जाता था। सुसमाचार के विवरणों में कम से कम सात घटनाएं मिलती हैं जिनमें ये झगड़े हुए। इन संघर्षों में से छह में यीशु पर अपराधी होने का आरोप लगा;[38] सातवें में उसके चेलों पर व्यवस्था पर उल्लंघन करने का आरोप लगा।[39] हर मामले में चाहे वह यीशु से जुड़ा हो या उसके चेलों से, यीशु ने मनुष्य की बनाई परम्पराओं को अनदेखा किया और केवल व्यवस्था की ओर देखा। वह ऐसा ही करता था। उसने व्यवस्था को मानने में कभी गलती नहीं की। जो भी व्यक्ति यीशु के पीछे चलने का निर्णय लेता है उसे परमेश्वर की आज्ञा को मानते हुए ऐसा करना आवश्यक है। परमेश्वर के मार्ग को सीधा करते हुए हमें मनुष्यों की परम्पराओं को अनदेखा या उनका खण्डन करना आवश्यक है। यीशु केवल परमेश्वर के वचन के साथ खड़ा होता था।

निष्कर्ष: जब मनुष्यों की बनाई हुई विधियों पर सवाल खड़े होते हैं तो हमारा केवल एक ही जवाब होता है कि हम तो परमेश्वर के वचन के पास जाएंगे और जहां तक हो सके अपनी पूरी कोशिश करेंगे कि हम पूरी तरह से उसी को मानेंगे। यीशु हमारा प्रभु है और वह हमें उस ईश्वरीय रिकॉर्ड तक वफ़ादारी से ले चलता है जो हमें हमारे स्वर्गीय पिता की ओर से दिया गया है।

टिप्पणयां

[1]समानांतर विवरण मत्ती 9:2 और लूका 5:17–20 में हैं। [2]NASB सहित, विभिन्न संस्करणों में कहा गया है कि वह ''घर में'' था (देखें CEB; CEV; ESV; NCV; NRSV)। यह एक अनुमान है, क्योंकि वह जब भी कफ़रनहूम में होता उसी घर में रुकता होगा। [3]मूलत: 2:1 यूनानी शब्द रचना का अर्थ ''घर में'' है जैसा कि ASV में है। ह्यूगो मेकॉर्ड के अनुवाद में ''किसी घर में'' है (ह्यूगो मेकॉर्ड, *मेकॉर्डस न्यू टैस्टामैंट ट्रांसलेशन ऑफ़ द एवरलास्टिंग गॉस्पल* [हैंडरसन, टैनिसी: फ्रीड–हार्डमैन कॉलेज, 1988])। [4]CEV ''वचन'' शब्द नहीं है और वहां केवल इतना कहा गया है ''यीशु अभी उपदेश दे रहा था''; परन्तु ज़ोर परमेश्वर के वचन पर है (देखें NLT)। [5]एल. ए. स्टॉफ़र, *मरक़ुस,* ट्रुथ कॉमैंट्रीज़, गार्डियन ऑफ़ ट्रुथ फ़ाउंडेशन (बॉलिंग ग्रीन, कैंटकी: स्टैंडर्ड पब्लिशिंग कं., 1999), 43. [6]आम तौर पर छतें ज्यादातर मिट्टी के लेप से बनाई गई चपटी होती थीं; और कई बार उनके ऊपर घास उग आती थी। इस छत को खोलने के लिए आदमियों को केवल खोदना ही था; बाद में इसे आसानी से मरम्मत किया जा सकता था जो कि यीशु के पास उस लकवे के रोगी को पहुंचाने के लिए छोटी सी कीमत थी। लूका 5:19 में कहा गया है कि मित्रों ने ''खपरैल हटा'' दी। यह इस बात का सुझाव देता है कि वह घर अधिकतर घरों से अधिक सम्पन्न था। [7]विलियम हैंड्रिक्सन, *एक्सपोज़िशन ऑफ़ द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू मरक़ुस,* न्यू टैस्टामैंट कॉमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1975), 88. [8]समानांतर विवरण मत्ती 9:3–8 और लूका 5:21–26 में हैं। [9]हैंड्रिक्सन, 86. [10]''पाप स्वीकार पीठिका'' बंद कमरा होता है जहां प्रीस्ट किसी सदस्य के अंगीकार को सुनता है। (*द डिक्शनरी ऑफ़ रलिजियस टर्म्स* [वैस्टवुड, न्यू जर्सी: फ्लेमिंग एच. रेवेल कं., 1967], 128 में डोनल्ड टी. कॉफ़मैन, सम्पा, ''कन्फेशनल।'')

[11]हेरोदी, जैसा कि उनके नाम से सुझाव मिलता है, हेरोदेसों का पक्ष लेने वाले लोग थे जबकि फरीसी आम तौर पर उसका पक्ष नहीं लेते थे। परन्तु फरीसियों ने इस समझौते को आवश्यक माना क्योंकि मसीह की हत्या करने के लिए उन्हें हेरोदी मित्रों के राजनैतिक प्रभाव की आवश्यकता थी। जोसेफ़स ने एसेनियों का उल्लेख किया, परन्तु हेरोदियों का नहीं। (जोसेफ़स *वार्स* 3.2.1 [11]; *एंटिक़ुइटीस* 15.10.4 [371–379].) जोसेफ़स की रिपोर्ट के आधार पर कि एसेनी लोग हेरोदेस के ''कमरे में'' थे (जिसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें उनका समर्थन था) एक अविश्वासी पुरातत्वविद शिमोन गिब्सन ने यह विचार दिया कि दोनों पदनाम एक ही समूह के हैं। (शिमोन गिब्सन, *द फाइनल डे ऑफ़ जीज़स: द आर्कियोलॉजिकल एविडेंस* [न्यू यॉर्क: हार्परवन, 2009], 100.) [12]पतरस

के अंगीकार के संदर्भ में (16:16) और मत्ती 16:27, 28 में चेला होने पर अपनी बाद की चर्चा में यीशु ने मत्ती 16:13 में अपने लिए "मनुष्य का पुत्र" शब्द इस्तेमाल किया। पतरस के अंगीकार और यीशु के जवाब के कारण कैथोलिक धर्मशास्त्रियों ने पतरस की "प्रमुखता" का बहस करना चुना है। परन्तु यह सही नहीं हो सकता। [13]ऐलन ब्लैक, *मरक़ुस,* द कॉलेज प्रैस NIV कॉमैंट्री (जोप्लिन, मिसोरी: कॉलेज प्रेस पब्लिशिंग कं., 1995), 68–69. यीशु का बार–बार इस वाक्यांश का इस्तेमाल करना मसीहा के संकेतों को दर्शाता है। [14]आर. ए. कोल के अनुसार यह अभिव्यक्ति "मुख्यतया दानिय्येल [7:13] के इस्तेमाल से ली गई, जिसे अंतर–नियम काल के दौरान विकसित किया गया," चाहे उसने उस काल का कोई स्रोत नहीं दिया। यह यीशु का खुद चुना शीर्षक था और मसीहा के लिए बाइबल के अनुसार नाम है, जो यीशु की भूमिका को "प्रतिनिधिक पुरुष" के रूप में दिखा सकता है। (आर. ए. कोल, *द गॉस्पल अकॉर्डिंग टू सेंट मरक़ुस: एन इंट्रोडक्शन ऐंड कॉमैंट्री,* द टिंडेल न्यू टैस्टामैंट कॉमैंट्रीज़ [ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. एडज़्मैंस पब्लिशिंग कं., 1973], 67, 67एन.) [15]ब्लैक, 69. [16]हैंड्रिक्सन, 91–92. [17]समानांतर विवरण मत्ती 9:9 और लूका 5:27, 28 में हैं। [18]स्टॉफ़र, 49. [19]हैंड्रिक्सन, 94. [20]समानांतर विवरण मत्ती 9:10–13 और लूका 5:29–32 में हैं।

[21]हैंड्रिक्सन, 96. [22]ब्लैक, 71. [23]हैंड्रिक्सन, 95. [24]यूनानी भाषा में ये वाक्यांश "फरीसियों के शास्त्री" (γραμματεῖς τῶν Φαρισαίων, *grammateis tōn Pharisaiōn*) है जो कि केवल यहीं मिलता है। (ब्लैक, 71, एन. 17.) [25]देखें मत्ती 23:1–3, 15. यीशु के कहने का अर्थ था संकेत दिया कि फरीसी लोग उस व्यवस्था को नहीं मानते थे जिसे वे सिखाते थे। उसने अपने चेलों को यह बताते हुए कि "वे कहते तो हैं पर करते नहीं" या कि उनका जीवन उनके जैसा नहीं होना चाहिए। [26]फरीसियों का सम्प्रदाय 165 ई.पू. में मक्काबी विद्रोह के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया माना जाता है। "फिर भी यह बाबुल की दासता के समय के फरीसियों के साथ मिलता जुलता यहूदियों का समूह था" (द *ज़ौंडरवन पिक्टोरियल बाइबल डिक्शनरी,* सम्पा. मेरिल सी. टेनी [ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: ज़ौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 1963], 647 में लॉरमन एम. पीटरसन, "फैरिसीस")। [27]समानांतर विवरण मत्ती 9:14, 15 और लूका 5:33–35 में हैं। [28]लैव्यव्यवस्था 16:29–31 में "अपने जीव को दु:ख देना" वाक्यांश का अर्थ "उपवास रखना" समझा जाता है, जैसा कि भजन 35:13 और यशायाह 58:3, 5 से संकेत मिलता लगता है। [29]देखें व्यवस्थाविवरण 9:9; एस्तेर 4:1–3; दानिय्येल 9:3. [30]मत्ती 9:16, 17 और लूका 5:36–39 में समानांतर विवरण हैं।

[31]पुराने वस्त्र और पुरानी मशकों के उदाहरणों से यह व्यापक अर्थ में समझाया जाता है। [32]समानांतर विवरण मत्ती 12:1–5 और लूका 6:1–4 में हैं। [33]मिशन्ना *शब्बत* 7.2. [34]यह "बलिदान नहीं परन्तु दया" का उदाहरण हो सकता है (देखें मत्ती 9:13)। [35]हैंड्रिक्सन, 106–7. [36]देखें 1 शमूएल 22:20; 2 शमूएल 8:17; 18:16; 24:6. [37]समानांतर विवरण मत्ती 12:8 और लूका 6:5 में है। [38]देखें 3:1–6; लूका 13:10–17; 14:1–6; यूहन्ना 5:1–16; 7:21–23; 9:1–41. [39]देखें 2:23–28.